सुन्दर विलास

सुन्दरदासजी के जीवन-चरित्र सहित

जिस में उन महात्मा ने अति मनोहर सवैया और छंदों में गुरु भक्ति, वैराग्य, चितावनी आदि के सिवाय, वेदांत के गूढ़ विषय को बड़ी सरल और मृदु कविता में वर्णन किया है।

कठिन शब्दों के अर्थ व संकेत नोट में दे दिये गये हैं।

इलाहाबाद

बेलवेडियर स्टीम प्रिंटिंग वर्क्स में प्रकाशित हुआ।

सन् १९१४

पहिला एडिशन] [दाम ॥=)

॥ संतबानी ॥

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जक्त-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी व उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से बिशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ ऐसे हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकर शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर सक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं और फुटकर शब्दों की हालत में सर्व-साधारन के उपकारक पद चुन लिये हैं, कई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी मे आये हैं उन के संक्षेप वृत्तांत और कौतुक फुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

यद्यपि ऊपर लिखे हुए कारनों से इन पुस्तकों के छापने में बहुत खर्च होता है तो भी सर्व-साधारन के उपकार हेतु दाम आध आना फ़ी आठ पृष्ठ (रायल) से अधिक नहीं रक्खा गया है।

प्रोप्रैटर, बेलवेडियर छापाखाना,

सितम्बर १९१४ ई०   इलाहाबाद

॥ सूचीपत्र ॥

सुंदरदास जी का जीवन-चरित्र

——:०:——

॥ जन्म कथा ॥

पिछले समय में चाल थी कि साधू लोग अपना वस्त्र बुनने के लिये जब काम पड़ता था सूत माँग लाया करते थे ऐसे ही एक दिन दादू दयाल के प्रेमी चेले जग्गाजी आमेर नगर में सूत माँग रहे थे और अपनी उमंग में यह हाँक लगाते थे "दे माई सूत ले माई पूत" जब साधू जी एक मोँकिया महाजन के घर के सामने पहुँचे जो दादू दयाल का भक्त था तो यह हाँक सुन कर उस की क्वारी कन्या सती नाम्नी तमाशा समझकर उन के सामने सूत लाकर बोली "लो बाबा जी सूत" जग्गाजी ने कहा "लो माई पूत"।

जब यह लौट कर अपने गुरू के स्थान पर आये तो उन अंतरयामी महात्मा दादू जी ने कहा कि तू ठगा आया क्योंकि इस कन्या के भाग में लड़का नहीं लिखा है सो कहाँ से आवे सिवाय इस के कि तू जाकर उसके गर्भ में बास करे। जग्गाजी उदास होकर बोले कि जो आज्ञा परंतु चरणों से अलग न रखियेगा। गुरू जी ने ढारस दी और आज्ञा की कि उस लड़की के माता पिता से कह आओ कि जहाँ उस कन्या का ब्याह ठहरे बर को जता दें कि जो पुत्र उत्पन्न होगा वह परम भक्त होगा परंतु ग्यारह बरस की अवस्था में बैराग लेलेगा। जग्गाजी ने इस आज्ञा का तुर्त प्रतिपालन किया।

कुछ दिनों में सती का ब्याह जैपुर राज की पहली राजधानी द्यौसा नगर में वहाँ के एक महाजन साह परमानंद "बूसर" गोती खंडेलवाल बनिये के साथ हुआ। कई बरस पीछे जग्गाजी ने शरीर त्याग कर सती जी के गर्भ में बास किया और दिन पूरे होने पर उन के उदर से चैत सुदी नवमी संबत १६५३ बिक्रमी को जन्म लिया। राघवदासकृत भक्तमाल में इन के जन्म का हाल यों लिखा है—

दिवसा है नग्र चोखा धूसर है साहूकार, सुंदर जनम लियो ताहि घर आइ कैं।
पुत्र को चाहि पति दई है जनाइ, त्रिया कह्यो समझाइ स्वामी कहो सुख दाइ कैं॥
स्वामी मुख कही सुत जनमैगो सही, पै बैराग लेगो वही घर रहै नहीं माइ कै।
एकादस बरस में त्याग्यो घर माल सब, वेदांत पुरान सुने बारानसी जाइ कै॥

॥ जाति ॥

सुंदरदास जी के बूसर बनिया होने का प्रमाण उन के रचे हुए कई ग्रंथोँ से पाया जाता है। एक बार लाहौर में एक दूसर बनिया इन से वृथा बाद बिवाद करने लगा उस के वर्णन में आप ने लिखा है—

"बूसर कहै तू सुन हो दूसर, बाद बिबाद न करना।
यह दुनिया तेरी नहिँ मेरी, नाहक क्योँ अड़ मरना॥"

॥ नाम-करण और गुरु-प्राप्ति ॥

संबत १६५६ में जब सुंदरदास जी की अवस्था छः बरस की थी दादू दयाल द्यौसा में पधारे। पिता ने बालक को उन के चरणोँ में डाल दिया। दयाल जी उनके सिर पर हाथ धर कर बोले "यह बालक बड़ा ही सुंदर है" कोई कहते हैँ कि वह ऐसा बोले कि "अरे सुंदर तू आगया" अर्थात् जग्गा तू ने सुंदर के शरीर में जन्म धारण कर लिया! जो कुछ हो "सुंदर" नाम आप का तभी से पड़ा और तभी आप दादू जी के शिष्य हुए। उन का दर्शन पाते ही सुंदरदास जी की बुद्धि कुछ और ही रंग की हो गई और गुरु भक्ति का अंकुर पौध सरिस होकर लहलहाने लगा, वह उसी दम गुरू के साथ हो लिये और नारायणा में दादू दयाल का संबत १६६० मे चोला छूटने तक उन के चरणोँ में रहे और इतने कम समय मे ही गुरु दया और पूर्ब संस्कार के प्रताप से अपना काम पूरा बना लिया। इन को जो बाल साधु और बाल कबि करके लिखा है वह यथार्थ है क्योँकि जब इन के गुरु महाराज परमधाम को सिधारे इन की अवस्था केवल आठ बरस की थी परंतु उस समय भी इन की कबिता वैसीही बिलक्षण थी जैसा इन का प्रेम वैराग्य और बुद्धि तीव्र थी। कहते हैँ कि दादूजी का परलोक होने पर उन के बड़े बेटे और उत्तराधिकारी गरीबदास ने सब साधुओँ को बुलाकर उन का बड़ा आदर सत्कार किया परंतु ईर्षा-बश सुंदरदास जी का सभा में कुछ अपमान किया, उस समय सुंदरदास जी ने उनकी शिक्षा के हेतु यह कड़ियाँ कहीँ—

क्या दुनिया अस्तूत करैगी, क्या दुनिया के रूसे से।
साहिब सेती रहो सुरखरू, आतम बखसे ऊसे से॥

क्या किरपन मूँजी की माया, नाँव न होय नपूँसे से।
कूड़ा बचन जिन्हाँ ने भाष्या, बिल्ली मरै न मूँसे से॥
जन सुंदर अलमस्त दिवाना, सब्द सुनाया धूँसे से।
मानूँ तो मरजाद रहैगी, नहिं मानूँ तो घूँसे से॥

यह बचन सकल समाज के मन भाया।

॥ विद्या उपार्जन और योगाभ्यास ॥

नारायणा से चल कर सुंदरदास जी कुछ दिन तक साधु प्रागदास (दादू दयाल के शिष्य) के संग डीडवाणे में रहे फिर साधु जगजीवण जी के साथ द्योसा में अपने माता पिता के घर आगये और यहाँ संबत १६६३ तक सतसंग हरि-चर्चा और पठन पाठन करते रहे फिर उसी बरस में जगजीवण जी के साथ जो भारी विद्वान संस्कृत के थे ११ बरस की अवस्था में काशी चले गये और वहाँ उन्नीस बरस तक अर्थात तीस बरस की उमर तक रह कर संस्कृत विद्या बेदांतादि दर्शण पुराण और योग के ग्रंथ पढ़े और उस का साधन भली भाँति लग कर किया और सब में निपुण हो गये। काशी में वह कई महात्माओँ और साधुओँ का सतसंग भी करते रहे।

॥ फ़तहपुर शेख़ावाटी गमन ॥

संबत १६८२ में सुंदरदास जी काशी से लौटे आप के साथ और भी साधू थे जिन में से एक फ़तहपुर शेख़ावाटी आने वाला था उसी के संग आप वहाँ आये और अपने प्रिय गुरु भाई प्रागदास जी को वहीँ ठहरा हुआ पाकर तथा वहाँ के साधु-भक्त साहूकारोँ की प्रार्थना पर वहीँ ठहर गये और योगाभ्यास डट कर किया और इसी के साथ सतसंग और कथा कीर्त्तन करते और कराते रहे और अनेक जीवोँ को सत मारग में लगाया। यहाँ सुंदरदास जी की कीर्त्ति बहुत फैली। कुछ दिनोँ प्रागदास जी के संग डीडवाणे में भी दूसरी बार रहे और बहुधा दादू दयाल की बाणी के अर्थ का बिचार और निर्णय उनके और साँगानेर वाले रज्जब जी के साथ करते रहे यहाँ तक कि उस गूढ़ बाणी के जानने में यह अद्वितीय समझे जाने लगे। इन के ग्रंथोँ को लोग दादू दयाल की बाणी का प्रदर्शक कहते हैं।

फ़तहपुर में वहाँ के नवाबों से भी सुंदरदास जी का पूरा मेल हो गया था मुख्यकर नवाब अलफ़ख़ाँ और उनके पुत्र दौलतख़ाँ और ताहिरख़ाँ के साथ। अलफ़ख़ाँ आप भाषा के कवि थे और उन के बनाये हुए कई ग्रंथ अब तक मौजूद हैं। सुंदरदास जी की करामातों और चमत्कारों को देख कर (जिन के दृष्टान्तों को यहाँ लिखने की आवश्यकता नहीं है) उनके चित्त में इन की बड़ी महिमा समा गई थी और उन को "मर्द ख़ुदा" कहने में संकोच नहीं करते थे।

॥ देशाटन ॥

संवत १६९९ में साधु प्रागदास जी का देहांत हो जाने पर सुंदरदास जी का चित्त फ़तहपुर में वैसा नहीं लगता था और वह प्रायः रामत को बाहर चले जाया करते थे। उत्तरीय भारत और राजपूताने में बहुत फिरे और जिन २ स्थानों में दादू दयाल ठहरे थे उनको देखा और जो २ दयाल जी के गुरमुख भक्त थे उन से मिले। बड़े २ तीर्थ स्थान और पंजाब के प्रसिद्ध नगरों में घूमे और दिल्ली लाहौर आदि की तो कई बार सैर की।

इन की यात्रा का चरित्र बहुत कुछ है परंतु यहाँ लिखने की ठौर नहीं। यात्रा ही में स्थान २ पर ग्रंथों की रचना की सो बात उन ग्रंथों के पढ़ने से विदित होती है।

॥ ग्रंथ रचना ॥

कह चुके हैं कि सुंदरदास जी बाल-कवि थे परंतु उन की वाणी में संसारी कवियों की नाईं थोथी जटक और तुकबंदी और पोला अलंकार नहीं है बरन बड़े २ साधु महात्मा की भाँति प्रेम वैराग्य गुरुभक्ति और अनुभव ज्ञान में पगी हुई है, चाहे उसे महा काव्य कहो चाहे एक भारी योगाभ्यासी का सत्य निरूपण, चाहे एक साधु-शिरोमणि की वाणी, वह भारतवर्ष के साहित्य भंडार में एक अनमोल रत्न है। शृंगार रस के वह बहुत विरुद्ध थे और सुंदर कवि की, जिस ने "सुंदर शृंगार" नामी ग्रंथ संवत १६८८ में आगरे में रचा था, इन के साथ एकता करना बड़ी भूल है—इस कविता तथा "रस मंजरी" पर उन्होंने कैसा कटाक्ष किया है—

रसिक प्रिया रसमंजरी और शृंगारहि जान।
चतुराई करि बहुत विधि विषय बनाई आन॥

विषय बनाई आन लगत विषयिन कूँ प्यारी।
जागै मदन प्रचंड सराहै नखसिख नारी॥
ज्यूँ रोगी मिष्टान खाइ रोगहि बिस्तारै।
सुंदर ये गति होइ जोइ "रसिक प्रिया" धारै॥

जैसे कि शृंगार रस से सुंदरदास जी को चिढ़ थी वैसी ही मिहीन कटाक्ष और हास्य रस से उनको रुचि थी—देखो उनकी कविता में बारीक चुटकियाँ और कटाक्ष और हँसोड़पन जिस में वेदांत की गंभीरता और रूखापन घुल जाता है। वेदांत मत के सार को सरल भाषा में संक्षेप से सर्व साधारण के उपकारार्थ दरसा देना इस में सुंदरदास जी अद्वितीय थे और इसी से राघवकृत भक्तमाल में इन को शंकराचार्य्य की पद्वी दी है।

सुंदरदास जी के ग्रंथ नीचे लिखे जाते हैं—

(१ ज्ञान समुद्र—पाँच उल्लासों* में।

(२) सवैया—३४ अंगों में जो सुंदर विलास के नाम से प्रसिद्ध है।

(३) "सर्वंगि योग" ग्रंथ से लेकर "पूर्वी भाषा बरवै" तक ३६ ग्रंथ।

(४) साखी—३१ अंगों में।

(५) पद (शब्द वा भजन)—२७ राग रागनियों में।

(६) चौबोला, गूढ़ार्थ, चित्र काव्य, दशों दिशा के सवैये और फुटकर।

ये ग्रंथ समय २ पर अनेक स्थानों में रह कर अलग २ प्रसंगवश रचे गये। ज्ञान समुद्र की रचना काशी में संबत १७१० में हुई, सवैया प्रायः फ़ुरसाने में बनी, अन्य भाषाओं के ग्रंथों की रचना उन्हीं देशों में निवास के समय में हुई है। यह निश्चय है कि संबत १७४३ के पीछे कोई बड़ा ग्रंथ नहीं रचा गया।

॥ बहु भाषा ज्ञान ॥

सुंदरदास जी संस्कृत के पंडित तो थे ही पर हिंदी के भी पूरे जानकार थे। संस्कृत में कविता का रचना उनको नापसंद था क्योंकि उससे सर्व साधारण का उपकार नहीं होता। वह फ़ारसी, पूरबी, पंजाबी, गुजराती, मारवाड़ी आदि भाषायें भी जानते थे जिस का उनके ग्रंथ प्रमाण हैं।

*लहरों।

॥ शौचाचार ॥

सुंदरदास जी शौच और सफ़ाई और स्वच्छ चाल व्यवहार को बहुत पसंद करते थे और गंदगी से घिनाते थे, इसी से पंजाब, दक्षिण मारवाड़, फ़तहपुर [शेख़ावाटी तक जहाँ उन का आप स्थान था] तथा गुजरात और पूरब के आचार व्यवहार पर बड़ा कटाक्ष किया है तथा अशुद्ध और मलिन व्यवहार की बड़ी हँसी उड़ाई है—गुजरात के लिये "आभड* छोत अतीत सैाँ कीजिये बिलाइ रु कूकर चाटत हाँडी"; मारवाड़ के बिषय में "वृच्छन नीर न उत्तम चीर सु देसन में गत† देस है मारू"; फ़तेहपुर की स्त्रियों के मलिन आचार पर "फूहड़ नार फ़तेहपुर की", दक्षिण के संबंध में "राँधत प्याज बिगारत नाज न आवत लाज करै सब भच्छन"; पूरब के देशों के आचार पर "ब्राह्मण छत्रिय वैस रु सूद्र चारौंहि बरन के मंछ बघारत", इत्यादि। जो देश आप को प्रिय थे वे मालवा, उत्तराखंड, तथा कुरसाना थे—उन के संबंध में कहा है "मालवो देस भलो सबही तें"; "जोग करन को भली दिस उत्तर"; तथा

पूरब पच्छिम उत्तर दच्छिन, देस बिदेस फिरे सब जानें।
केतक द्यौस फतेपुर माहिं सु, केतक द्यौस रहे डिडवानें॥
केतक द्यौस रहे गुजरात हू, उहाँ हू कछू नहिं आयो है ठानें।
(अब) सोच बिचार के सुंदरदास जु, याही तें आनि रहे कुरसाने॥

॥ अंत काल ॥

सुंदरदास जी अनुमान संवत १७४३ तक फ़तेहपुर में रहे फिर संवत १७४५ के पीछे रामत करते साँगानेर को पधारे जो जयपुर से चार कोस दक्खिन को है और जहाँ दादू दयाल के प्रधान और श्रेष्ठ शिष्य रज्जब जी उनके और शिष्यों के साथ रहा करते थे जिनसे सुंदरदास जी का प्रीति भाव था। यहाँ वह और भी कई बार आये थे और बहुत समय तक ठहर कर कई ग्रंथ रचे थे। स्वयं रज्जब जो की कविता भी उत्तम और प्रसिद्ध है।

इस समय सुंदरदास जी यहाँ रोगग्रस्त हुए और बीमारी बढ़ती ही गई परंतु औषधि सिवाय राम नाम के कुछ भी न ली सदा ध्यान में लीन रहते थे अंत को नदी किनारे मिती कातिक सुदी ८ वृहस्पतिवार संवत १७४६ को शरीर त्याग किया। आप ने अंत काल जो बचन कहे थे वह "अंत समय की साखी" के नाम से विख्यात हैं।

---

*भिटना। †गया बीता।

मान लिये अंतःकरण जे इंद्रिन के भोग।
सुंदर न्यारो आतमा, लगो देह को रोग ॥ १ ॥
वैद्य हमारे रामजी, औषधि हू हरि नाम।
सुंदर यहै उपाय अब, सुमिरण आठैाँ जाम ॥ २ ॥
सुंदर संशय को नहीँ, बड़ो महुच्छव येह।
आतम परमातम मिल्यो, रहो कि बिनसो देह ॥ ३ ॥
सात बरस सौ मेँ घटैँ, इतने दिन की देह।
सुंदर आतम अमर है, देह खेह की खेह ॥ ४ ॥

अरथी के साथ मेँ बड़ा जमघटा दादूपंथी साधुओँ और सेवकोँ और सुंदरदास जी के शिष्योँ का था। धाभाई का बगीचा जहाँ अब है उस से परे दाह क्रिया की गई। इस स्थान पर एक छोटी गुमटी बनी हुई है जिस मेँ सपेद पत्थर पर इन के और इन के छोटे शिष्य नारायणदास के चरण चिन्ह और यह दोहा खुदा है—

संवत सत्रा सै छीयाला। कातिक सुदि अष्टमी उजाला ॥
तीजे पहर भरस्पति बार। सुंदर मिलिया सुंदर सार ॥

॥ रूप ॥

सुंदरदास जी डील डौल मेँ बड़े सुंदर, गोरे रंग के, तेजस्वी और उँचे क़द के थे, मस्तक भारी और ललाट (पेशानी) ऊँचा, आँखेँ सुंदर चमकदार थीँ, वाणी मधुर मनोहारिणी थी और न बहुत बोलते थे न थोड़ा। खान पान आचार ब्यवहार मेँ बड़े ही पक्के संजमी थे। बालकोँ को देख उन के साथ बार्त्तालाप से बड़े प्रसन्न होते और कभी २ उन को चटकीले छंद बना कर सुनाते। ध्यान भजन और पाठ मेँ कभी नहीँ थकते वृद्ध अवस्था तक ऐसा ही स्वभाव रहा। आप आशु कवि थे अर्थात बिना प्रयास के कविता करते थे और एक बेर बना कर फिर उस की काट छाँट नहीँ करते थे। सभा मे बेधड़क बोलते थे, स्वभाव के बड़ेही स्वतंत्र थे, किसी की कुछ परवाह नहीँ रखते परंतु किसी का दिल दुखाने की बात न करते। दिल्लगी और हँसी का सुभाव था, वेदांत के बड़े प्रेमी थे और भगवत भक्ति के मर्मबेधी प्रसंग पर आँखोँ से आँसू की धारा बहा देते थे

तथा आप की कथा भी ऐसी ही मनोग्राही हुआ करती थी। आप बाल-ब्रह्म-चारी थे, स्त्री चर्चा से बड़ी घृणा थी। गुरु बचन के बड़े पक्के माननेवाले और दादू बाणी और शास्त्र की बड़ी टेक रखते थे।

॥ शिष्य और थाँभे ॥

सुंदरदास नाम के दादूजी के दो शिष्य थे। बड़े सुंदरदास जी तो बीकानेर के राज्य घराने के थे जो नागोँ की जमात के आदि प्रचारक हुए और छोटे सुंदर-दास जी जो हमारे इस जीवन-चरित्र के नायक हैँ दयाल जी के समस्त शिष्योँ और ५२ थाँभा-धारियोँ मेँ सब से छोटे थे। इन का स्थान फ़तेहपुर शेख़ावाटी मेँ रहा और इन के निज थाँभे के शिष्य यहीँ के प्रसिद्ध हैँ। योँ तो इन के कितने ही चेले थे परंतु स्थान-धारी पाँच ही थे अर्थात टिकैतदास, श्यामदास, दामोदर-दास, निर्मलदास, और नारायणदास। इन मेँ नारायणदास जी का तो सुंदर-दास जी के सामने ही संबत १७३८ मेँ चोला छूट गया था, उन के शिष्य रामदास को फ़तेहपुर का स्थान मिला। शेष चार शिष्य मोर, चूरू (बीकानेर) आदि स्थानोँ मेँ जा बसे।

॥ स्मारक चिन्ह ॥

फ़तेहपुर शेख़ावाटी के आश्रम के सिवाय सुंदरदास जी के कितने ही स्मारक चिन्ह अब तक उन के अनुयाइयोँ के पास मौजूद हैँ जैसे उन के हाथ की लिखी हुई पुस्तकेँ और चिट्ठी, उन का टोपा, चादर, पलँग, चित्र, इत्यादि।

-:०:-

हम अपने कृपालु मित्र पंडित हरिनारायण जी पुरोहित बी०ए० जयपुर राज्य के अकौन्टन्ट-जेनरल को हृदय से धन्यबाद देते हैँ जिन्होँ ने विस्तृत जीवन-चरित्र महात्मा सुंदरदास जी का कृपा करके हम को दिया और उस को घटाने बढ़ाने और जहाँ तहाँ शब्दोँ के बदलने को भी आज्ञा दी॥

सुंदरविलास

१—गुरुदेव का अंग

॥ इंदव छंद ॥

मौज करी गुरुदेव दया करि,
सबद सुनाय कह्यो हरि नेरो।
ज्यौं रवि के प्रगटे निसि जात सु,
दूरि कियो भ्रम भानु अँधेरो॥
कायक वायक[1] मानस हूँ करि,
है गुरुदेवहिं बंदन[2] मेरो।
सुंदरदास कहै कर जोरि जु,
दादू दयालु को हूँ नित चेरो॥ १॥

पूरण ब्रह्म बिचार निरंतर,
काम न क्रोध न लोभ न मोहै।
स्रोत्र त्वचा रसना अरु घ्राण सु,
देखि कछू कहुँ नैन न मोहै॥
ज्ञान स्वरूप अनूप निरूपन,
जासु गिरा[3] सुनि मोह न मोहै।
सुंदरदास कहै कर जोरि जु,
दादू दयालहिं मोरि नमो है॥ २॥

धीरजवंत अडिग्ग जितेंद्रिय,
निर्मल ज्ञान गह्यो दृढ़ आदू।

(१) वाचक। (२) प्रनाम। (३) बानी।

सील सँतोष छिमा जिनके घट,
लागि रह्यो सु अनाहद नादू ॥
बेष न पच्छ निरंतर लच्छ जु,
और नहीं कछु बाद बिबादू ।
ये सब लच्छन हैं जिन माहिं सु,
सुन्दर के उर हैं गुरु दादू ॥ ३ ॥
भवजल मैं बहि जात हुते जिन,
काढ़ि लियो अपनो करि आदू ।
और सँदेह मिटाय दिये सब,
कानन टेर सुनाय के नादू[१] ॥
पूरन ब्रह्म प्रकास कियो पुनि,
छूटि गयो यह बाद बिबादू ।
ऐसि कृपा जु करी हम ऊपर,
सुंदर के उर हैं गुरु दादू ॥ ४ ॥
कोउक गोरख को गुरु थापत,
कोउक दत्त दिगंबर[२] आदू ।
कोउक कंथर कोउक भर्थर,
कोउ कबीर कि राखत नादू ॥
कोउ कहै हरिदास हमार जु,
यूँ करि ठानत बाद बिबादू ।
और तो संत सबै सिर ऊपर,
सुंदर के उर हैं गुरु दादू ॥ ५ ॥
कोउ बिभूति जटा नख धारि,
कहै यह बेष हमारो है आदू[३] ।

---

(१) शब्द । (२) नंगे साधू । (३) आदि का ।

कोउक कान फराय फिरै पुनि,
कोउक सिंगि बजावत नादू ॥
कोउक केस लुचाइ करै ब्रत,
कोउक जंगम के सिव बादू ।
यौं सब भूलि परे जितही तित,
सुंदर के उर हैं गुरु दादू ॥ ६ ॥

जोगि कहैं गुरु जैन कहैं गुरु,
बौद्ध कहैं गुरु जंगम मानैं ।
भक्त कहैं गुरु न्यासि[1] कहैं,
बनबासि कहैं गुरु और बखानैं ॥
सेख कहैं गुरु सूफि[2] कहैं गुरु,
याहि तैं सुंदर होत हिरानैं[3] ॥
वाहु कहैं गुरु वाहु कहैं गुरु,
है गुरु सोई सबै भ्रम भानै[4] ॥ ७ ॥

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु,
सत्व रजो तम ताप निवारी ।
इंद्रिय देह मृषा[5] करि जानत,
सीतलता समता[6] उर धारी ॥
ब्यापक ब्रह्म बिचार अखंडित,
द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
सब्द सुनाय सँदेह मिटावत,
सुंदर वा गुरु की बलिहारी ॥ ८ ॥

(१) उदासी । (२) सूफ़ी । (३) हैरान । (४) तोड़ै । (५) बृथा । (६) बराबरी ।

पूरनब्रह्म बताय दियो जिन,
एक अखंडित ब्यापक सारे ।
राग रु द्वेष करैं अब कौन सूँ,
जो अहि[१] मूल वही सब डारे ॥
संसय सोक मिट्यो मन को सब,
तत्त्व बिचार कह्यो निरधारे ।
सुंदर सुद्ध किये मल धोइ जु,
है गुरु को उर ध्यान हमारे ॥ ९ ॥
ज्योँ कपड़ा दरजी गहि ब्यौँतत,
काठहि को बढ़ई कसि आनै ।
कंचन को जु सुनार कसै पुनि,
लोह को घाट लुहारहि जानै ॥
पाहन को कसि लेत सिलावट[२],
पात्र कुम्हार के हाथ निपानै ।
तैसहि सिष्य कसै गुरुदेव जु,
सुंदरदास तवै मन मानै ॥ १० ॥

॥ मनहर छंद ॥

सत्रु हू न मित्र कोऊ, जा के सब हैं समान ।
देह को ममत्व छाड़ि, आतमाही राम हैं ॥
और हू उपाधि जा के, कबहूँ न देखियत ।
सुख के समुद्र मैं रहत, आठो जाम[३] हैं ॥
ऋद्धि[४] अरु सिद्धि[५] जा के, हाथ जोरि आगे खड़ी ।
सुंदर कहत ता के, सबही गुलाम हैं ॥

(१) है । (२) सगतराश । (३) पहर । (४) नौ तरह की बिभूति । (५) आठ तरह की सिद्धि शक्ति ।

अधिक प्रसंसा हम, कैसे करि कहि सकैं ।
ऐसे गुरुदेव को हमारो, जु प्रनाम है ॥ ११ ॥
ज्ञान को प्रकास जा के, अंधकार भयो नास ।
देह अभिमान जिन, तज्यो जानि छारधी ॥
सोई सुखसागर, उजागर बैराग रँग्यो ।
जा के बैन सुनत, बिलात है बिकारधी ॥
अगम[1] अगाध[2] अति, कोऊ नहिं जानै गति ।
आतमा को अनुभव, अधिक अपारधी ॥
ऐसे गुरुदेव बंदनीक,[3] तिहुँ लोक माहिं ।
सुंदर बिराजमान, सोभत उदारधी ॥ १२ ॥
काहू सौं न रोष[4] तोष[5], काहू सौं न राग द्वेष ।
काहू सौं न बैर भाव, काहू सौं न घात है ॥
काहू सौं न बकवाद, काहू सौं नहीं बिषाद ।
काहू सौं न संग न तौ, काहू पच्छपात है ॥
काहू सौं न दुष्ट बैन, काहू सौं न लेन देन ।
ब्रह्म को बिचार कछू, और न सुहात है ॥
सुंदर कहत सोई, ईसन को महाईस ।
सोई गुरुदेव जा के, दूसरी न बात है ॥ १३ ॥
लोह कूँ ज्यूँ पारस, पषानहू पलटि लेत ।
कंचन छुवत होत, जग मैं प्रमानिये ॥
द्रुम[6] कूँ ज्यूँ चंदन, पलटही लगाय बास ।
आप के समान ता कूँ, सीतलता आनिये ॥

(१) जहाँ कोई जा नहीं सकता। (२) अथाह। (३) बंदना करने योग्य (४) क्रोध। (५) प्रसन्नता। (६) पेड़।

कीट कूँ ज्यूँ भृंगिहू, पलटि के करत भृंगि ।
सोऊ उड़ि जाइ ता को, अचरज मानिये ॥
सुंदर कहत यह, सगरे प्रसिद्ध बात ।
सद[1] सिष्य पलटै सो, सतगुरु जानिये ॥ १४ ॥

गुरु बिन ज्ञान नहिँ, गुरु बिन ध्यान नहिँ ।
गुरु बिन आतम, बिचार न लहतु है ॥
गुरु बिन प्रेम नहिँ, गुरु बिन नेम नहिँ ।
गुरु बिन सीलहु, संतोष न गहतु है ॥
गुरु बिन प्यास नहिँ, बुद्धि को प्रकास नहिँ ।
भ्रमहू को नास नहिँ, संसेई रहतु है ॥
गुरु बिन बाट नहिँ, कौड़ी बिन हाट नहिँ ।
सुंदर प्रगट लोक, बेद यों कहतु है ॥ १५ ॥

पढ़े के न बैठै पास, अच्छर न बाँचि सकै ।
बिनहीं पढ़े तेँ कैसे, आवत है पारसी ॥
जौहरी के मिले बिन, परखि न जानै कोई ।
हाथ नग लिये रहै, संसय न टारसी ॥
बैदहु न मिल्यो कोऊ, बूटी को बताइ देत ।
भेद बिनु पाये वा के, औषध है छार सी ॥
सुंदर कहत मुख, रंचहु न देख्यो जाइ ।
गुरु बिन ज्ञान ज्यौं, अँधेरे मैं आरसी ॥ १६ ॥

गुरु के प्रसाद बुद्धि, उत्तम दसा को गहै ।
गुरु के प्रसाद, भवदुःख[2] बिसराइये ॥

---

(१) सदा, निरंतर । (२) संसारिक दुःख ।

गुरु के प्रसाद प्रेम, प्रीतिहु अधिक बाढ़ै ।
गुरु के प्रसाद, राम नाम गुण गाइये ॥
गुरु के प्रसाद, सब जोग की जुगति जानै ।
गुरु के प्रसाद, सून्य मैं समाधि लाइये ॥
सुंदर कहत, गुरुदेव जो कृपालु होइ ।
तिनके प्रसाद, तत्त्वज्ञान पुनि पाइये ॥ १७ ॥

बूड़त भवसागर मैं, आइ कै बँधावै धीर ।
पारहु लगाइ देत, नाव कूँ ज्यूँ खेव सो ॥
परउपकारी सब, जीवन के सारै[१] काज ।
कबहुँ न आवै जा के, गुणनि को छेव[२] सो ॥
बचन सुनाइ भय, भ्रम सब दूरि करै ।
सुंदर दिखाई देत, अलख[३] अभेव सो ॥
औरहु सनेही हम, नीके करि देखे सोधि[४] ।
जग मैं न कोऊ, हितकारी गुरुदेव सो ॥ १८ ॥

गुरु मात गुरु तात, गुरु बंधु निज गात ।
गुरुदेव नखसिख, सकल सँवार्‍यो है ॥
गुरु दिये दिव्य नैन, गुरु दिये मुख बैन ।
गुरुदेव सरवण दे, सबद उचार्‍यो है ॥
गुरु दिये हाथ पाँव, गुरु दिये सीस भाव ।
गुरुदेव पिंड माहिं, प्राण आइ डार्‍यो है ॥
सुंदर कहत गुरुदेव, जो कृपालु होइ ।
फिरि घाट घड़ि करि, मोहि निस्तार्‍यो[५] है ॥१९॥

---

(१) चलाता है । (२) अंत । (३) अदृश्य । (४) जाँचकर । (५) पार किया ।

कोऊ देत पुत्र धन, कोऊ देत बल घन[1]।
कोऊ देत राज साज, देव ऋषि मुन्यो है॥
कोऊ देत जस मान, कोऊ देत रस आन।
कोऊ देत विद्या ज्ञान, जगत मैं गुन्यो है॥
कोऊ देत ऋद्धि सिद्धि, कोऊ देत नवनिद्धि।
कोऊ देत और कछु, ता तैं सीस धुन्यो है॥
सुंदर कहत एक, दियो जिन राम नाम।
गुरु सौं उदार कोऊ, देख्यो है न सुन्यो है॥२०॥

भूमिहु की रेणु[2] की तो, संख्या कोउ कहत है।
भारहू अठार द्रुम, तिनके जो पात हैं॥
मेघन की संख्या सोऊ, ऋषि ने कही बिचारि।
बुंदन की संख्या तेऊ, आइ के बिलात[3] हैं॥
तारन की संख्या सोऊ, कही है पुराण माहिं।
रोमन की संख्या पुनि, जितनेक गात[4] हैं॥
सुंदर जहाँ लौं जंत[5], तिनहीं को आवै अंत।
गुरु के अनन्त गुण, का पै कहे जात हैं॥ २१॥

गोबिंद के किये, जीव जात है रसातल को।
गुरु उपदेसे सौं तो, छूटै जम फंद तैं॥
गोबिंद के किये, जीव बस परे कर्मन के।
गुरु के निवाजे सूँ, फिरत हैं स्वच्छंद[6] तैं॥
गोबिंद के किये, जीव बूड़त भवसागर मैं।
सुंदर कहत गुरु, काढ़ै दुःख द्वंद[7] तैं॥

(१) बहुत। (२) ज़र्रा। (३) नष्ट होना। (४) गाते। (५) जीवधारी। (६) स्वाधीन। (७) झगड़ा।

और हू कहाँ लैाँ कछू, मुख तैँ कहूँ बनाय।
गुरु की तौ महिमा, अधिक है गोबिंद तैँ॥ २२॥

चिंतामणि पारस, कलपतरु कामधेनु।
औरहु अनेक निधि, वारि वारि नाखिये[1]॥
जोई कछु देखिये सो, सकल बिनासवंत।
बुद्धि मैँ बिचार करि, बहु अभिलाखिये॥
ता तैँ मन बचन करम, करि कर जोरि।
सुंदर चरण सीस, मेलि दीन भाखिये॥
बहुत प्रकार तीनोँ लोक, सब सोधे हम।
ऐसी कैान भैँट, गुरुदेव आगे राखिये॥ २३॥

महादेव बामदेव, ऋषभ कपिलदेव।
व्यास सुकदेव जयदेव, नामदेव जू॥
रामानंद सुखानंद, कहिये अनंतानंद।
सुरसुरानंदहू के, आनँद अछेव जू॥
रैदास कबीरदास, सोझादास पीपादास।
दासहू के दास भाव, भावहू की टेव[2] जू॥
सुंदर सकल संत, प्रगट जगत माहिँ।
तैसे गुरु दादूदास, लागे हरि सेव जू॥ २४॥

गुरुदेव सर्बोपरि, अधिक बिराजमान।
गुरुदेव सबहि तैँ, अधिक गरिष्ठ[3] हैँ॥
गुरुदेव दत्तात्रय, नारद सुकादि मुनि।
गुरुदेव ज्ञान घन, प्रगट बसिष्ठ हैँ॥
गुरुदेव परम, आनँद मय देखियत।
गुरुदेव बर, बरियानहू बरिष्ठ[4] हैँ॥

---

(१) डालिये। (२) आदत। (३) मर्यादापन्न। (४) अति श्रेष्ठ।

सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय।
ऐसे गुरुदेव दादू, मेरे सिर इष्ट हैं ॥ २५ ॥
जोगी जैन जंगम, सन्यासी बनबासी बौद्ध।
और कोऊ बेष पच्छ, सब भ्रम भान्यो है ॥
तापस रु ऋषीसुर, मुनीसुर कबीसुर।
सबनि को मत देखि, तत्त्व पहिचान्यो है ॥
बेदसार तत्त्वसार, सिम्रिति पुराण सार।
ग्रंथन को सार सोई, हृदय माहिं आन्यो है ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय।
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ॥ २६ ॥
जीते हैं जु काम क्रोध, लोभ मोह दूरि किये।
और सब गुणिनि को, मद जिन भान्यो है ॥
उपजै न ताप कोई, सीतल सुभाव जा को।
सबही में समता, संतोष उर आन्यो है ॥
काहू सौं न राग[1] दोष[2], देत सबही को तोष।
जीवतही पायो मोष, एक ब्रह्म जान्यो है ॥
सुंदर कहत कछु, महिमा कही न जाय।
ऐसो गुरुदेव दादू, मेरे मन मान्यो है ॥ २७ ॥

इति गुरुदेव को अंग संपूर्ण ॥ १ ॥

२—उपदेश चिंतामणि को अंग।

॥ हंसाल छंद ॥

तो सही चतुर सुजान परबीण अति,
परै जिनि पिंजरे मोह कूवा।

(१) प्रीति। (२) बैर।

पाय उत्तम जनम लाय ले चपल[1] मन,
गाय गोविंद गुण जीत जूवा ॥
आपही आप अज्ञान नलिनी बंधो,
बिना प्रभु बिमुख कै बेर मूवा ।
दास सुंदर कहै परम पद तौ लहै,
राम हरि राम हरि बोल सूवा ॥ १ ॥
नफस सैतान[2] कूँ आपने कैद कर,
क्या दुनी[3] मैं फिरै खाय गोता ।
है गुनेगार भी गुनाही करत है,
खायगा मार तब फिरै रोता ॥
जिन तुझे खाक[4] से अजब[5] पैदा किया,
है उसे क्यूँ फरामोस[6] होता ॥
दास सुंदर कहै सरम तबही रहै,
हक्क तू हक्क तू बोल तोता ॥ २ ॥
आबकी[7] बुंदहि वजूद[8] पैदा किया,
नैन मुख नासिका[9] कर सँजूती[10] ।
खेल ऐसा करै, ओहि लीये फिरै,
जाग के देख क्या करै सूती ॥
भूलि उस खसम[11] को काम तैं क्या किया,
बेगही याद कर मर निपूती ।
दास सुंदर कहै सर्ब सुख तौ लहै,
भी तुहीं भो तुहीं बोल तूती ॥ ३ ॥

---

(१) चंचल । (२) भरमाने वाला मन । (३) संसार ।(४) मिट्टी । (५) विचित्र । (६) भूलता । (७) पानी । (८) देह । (९) नाक । (१०) ठीक । (११) स्वामी ।

अवल[१] उस्ताद के कदम[२] की खाक हो,
हिर्स बुगुज़ार सब छोड़ फेना[३]।
यार दिलदार[४] दिल माहिँ तू याद कर,
है तुझी पास तू देख नैना ॥
जान का जान है जिंद का जिंद है,
सुखन[५] का सुखन कछु समझ सैना[६]।
दास सुंदर कहै सकल घट मैं रहै,
एक तू एक तू बोल मैना ॥ ४ ॥

॥ मनहर छंद ॥

कान के गये तैँ कहाँ कान ऐसे होत मूढ़,
नैन के गये तैँ कहाँ नैन ऐसे पाइये।
नासिका गये तैँ कहाँ नासिका सुगंध लेत,
मुख के गये तैँ ऐसे मुख कहाँ गाइये ॥
हाथ के गये तैँ कहाँ हाथ ऐसो काम होत,
पाँव के गये तैँ ऐसे पाँव कित धाइये।
याहि तैँ बिचार देख सुंदर कहत तोहिँ,
देह के गये तैँ ऐसी देह कित पाइये ॥ ५ ॥

बार बार कह्यो तोहिँ सावधान क्यूँ न होइ,
ममता की मोट सिर काहे को धरतु है।
मेरो धन मेरो धाम मेरे सुत मेरी बाम[७],
मेरे पसु मेरे ग्राम भूल्योही फिरतु है ॥
तू तो भयो बावरो बिकाइ गई बुद्धि तेरी,
ऐसो अंध कूप गेह ता मैं तू परतु है।

---

(१) पहले। (२) पाँव। (३) लालच और पसारे को दूर करो। (४) जीवन का जीवन। (५) शब्द। (६) इशारा। (७) स्त्री।

सुंदर कहत तोहिं नेकहू न आवै लाज,
काज को बिगार के अकाज क्यों करतु है ॥ ६ ॥
तेरे तो कुपेच पर्‌यो गाँठि अति घूरि[1] गई,
ब्रह्मा आइ छोरै क्यूँही छूटत न जबहू।
तेल सूँ भिजोइ करि चीथरा लपेटि राखै,
कूकर को पूँछ सूधो होत नाहिं तबहू ॥
सासु देत सीख बहू कीरी कूँ गिनत जाइ,
कहत कहत दिन बीत गयो सबहू ।
सुंदर अज्ञानी ऐसो छोड़ै नाहिं अभिमान,
निकसत प्राण लग चेतै नाहिं कबहू ॥ ७ ॥
बालू माहिं तेल नाहिं निकसत काहू बिधि।
पत्थर न भीजै बहु बरखत घन[2] है ।
पानी के मथे तें कहूँ घीउ नहिं पाइयत,
कूकस[3] के कूटे कहूँ निकसत कन है ॥
सून्यही की मूठी भरि हाथ न परत कछु,
ऊसर मैं बोये कहा निपजत अन है ।
उपदेस औषध सो कैान बिधि लागै ताहि,
सुंदर असाध रोग भयो जा के मन है ॥ ८ ॥
बैरी घर माहिं तेरे जानत सनेही मेरे,
दारा[4] सुत वित्त[5] तेरे खोसि खोसि खायँगे ।
औरहू कुटुम्ब लोक लूटै चहुँ ओरही तें,
मीठी मीठी बात कहि तो सूँ लपटायँगे ॥
संकट परेगो जब कोई नहिं तेरा तब,
अंतही कठिन बाँको[6] बेर उठि जायँगे ।

(१) जकड़ । (२) बादल । (३) भूसी । (४) स्त्री । (५) सम्पत्ति । (६) टेढ़ी ।

सुंदर कहत ता तैं झूठोही प्रपंच सब,
सुपने की नाईं सब देखत बिलायँगे ॥ ९ ॥
बारू के मंदिर माहिं बैठि रह्यो स्थिर होइ,
राखत है जीवन की आस केऊ दिन की ।
पल पल छीजत घटत जात घरी घरी,
बिनसत बेर कहा खबर न छिन की ॥
करत उपाय झूँठे लेन देन खान पान,
मूसा इत उत फिरै ताकि रही मिनकी[1] ।
सुंदर कहत मेरी मेरी करि भूल्यो सठ,
चंचल चपल माया भई किन किन की ॥ १० ॥
सरवण ले जाइ करि नाद[2] की ले डारै फाँसो,
नैनहू ले जाइ करि रूप बस कस्यो है ।
नासिका ले जाइ करि बहुत सुंघावै गंध,
रसना[3] ले जाइ करि स्वाद मन हस्यो है ॥
त्वचाहू ले जाइ करि नारि सूँ स्पर्स करै,
सुंदर कोइक साधु ठगन तैं डस्यो है ॥
काम ठग क्रोध ठग लोभ ठग मोह ठग,
ठगन की नगरी मैं जीव आइ पस्यो है ॥ ११ ॥
पायो है मनुष्य देह औसर बन्यो है येह,
ऐसी देह बार बार कहो कहाँ पाइये ।
भूलत है बावरे तू अब के सयानो होइ,
रतन अमोल सो तौ काहे कूँ ठगाइये ॥
समुझि बिचार करि ठगन को संग त्यागि,
ठगबाजी देखि करि मन न डुलाइये ।

(१) बिल्ली । (२) शब्द । (३) जीभ

सुंदर कहत ता तैं सावधान क्यूँ न होइ,
हरि को भजन करि हरि मैं समाइये ॥ १२ ॥
घरी घरी घटत छीजत जात छिन छिन,
भीजतही गली जात माटी को सो ढेल है ।
मुकुति के द्वार आइ सावधान क्यूँ न होइ,
बार बार चढ़त न त्रिया को सो तेल है ॥
करि ले सुकृत हरि भजि ले अखंड नर,
याही मैं अंतर परे या मैं ब्रह्म मेल है ।
मानुष जनम यह जीत भावै हार अब,
सुंदर कहत या मैं जुवा को सो खेल है ॥ १३ ॥
जोवन[१] को गयो राज और सब भयो साज,
आपनी दुहाई फेरि दमामो[२] बजायो है ।
लकुटी[३] हथियार लिये नैन कर ढाल दिये,
सेत बार भये ता के तंबू सो तनायो है ॥
दसन[४] गये सु मानो दरबान[५] दूरि किये,
जो गदी परो सो आन बिछानो बिछायो है ।
सीस कर कंपत सु सुंदर निकार्‍यो रिपु[६],
देखतही देखत बुढ़ापो दौरि आयो है ॥ १४ ॥
देह को न देह कछु देह को ममत्व छाड़,
देह तौ दमामो दिये देह देह जात है ।
घट तौ घटत घरि घरि घट नास होत,
घट के गये तैं घट की न फिर बात है ॥

(१) जवानी । (२) नगारा । (३) लाठी । (४) दाँत । (५) ड्योढ़ीदार । (६) बैरी ।

पिंड पिंड माहिँ पिंड पिंड कूँ उपावत है,
पिंड पिंड खात पुनि पिंडही को पात है।
सुंदर न होय जा सूँ सुंदर कहत जग,
सुंदर चैतन्य रूप सुंदर बिख्यात है ॥ १५ ॥

॥ इंदव छंद ॥

ग्रीव[१] त्वचा कटि[२] है लटकी,
कच[३] हूँ पलटे अजहूँ रत बामी[४]।
दंत गये मुख के उखरे नख,
रैन गये सु खरोखर[५] कामी ॥
कंपत देह सनेह सु दंपति,
संपत जंपत है निसि जामी।
सुंदर अंतहु भैान तज्यो,
न भज्यो भगवंत सु लैाणहरामी[६] ॥ १६ ॥
देह घटी पग भूमि मँडै नहिँ,
औ लठिया पुनि हाथ लई जू ॥
आँखिहु नाक परै मुख तैँ जल,
सीस हलै कटि ढीच[७] नयी[८] जू।
ईसुर कूँ कबहूँ न सँभारत,
दुक्ख परै तब हाइ दई जू।
सुंदर तोहिँ बिषय सुख बंछत,
घोड़े गये पै बगै[९] न गई जू ॥ १७ ॥

(१) गर्दन। (२) कमर। (३) बाल। (४) स्त्री। (५) बहुत ठीक। (६) नमक-हराम। (७) कूबड़। (८) झुकी। (९) लगाम।

॥ सवैया छंद ॥

पाइ अमूलक[1] देह यहै नर,
क्यूँ न बिचार करै दिल अंदर ।
कामहु क्रोधहु लोभहु मोहहु,
लूटत है दसहू दिसि ढुंदर[2] ॥
तू अब बंछत[3] है सुरलोकहि,
कालहु पाइ परै सु पुरंदर[4] ।
छाड़ि कुबुद्धि सुबुद्धि हृदय धरि,
आतमराम भजै क्यूँ न सुंदर ॥ १८ ॥

॥ इंदव छन्द ॥

इंद्रिन के सुख मानत है सठ[5],
याहिहि तैं बहुते दुख पावै ।
ज्यूँ जल मैं झख[6] माँस ही लीलत[7],
स्वाद बँध्यो जल बाहरि आवै ॥
ज्यूँ कपि मूँठि न छाड़त है,
रसना बस बंध पर्यो बिललावै[8] ।
सुंदर क्यूँ पहिले न सँभारत,
जो गुड़ खाय सु कान बिधावै[9] ॥ १९ ॥
कौन कुबुद्धि भई घट अंतर,
तू अपने प्रभु सूँ मन चोरै ।
भूलि गयो बिषया सुख मैं सठ,
लालच लागि रह्यो अति थोरै ॥

---

(१) अनमोल । (२) संसार । (३) कामना करता है । (४) इन्द्र । (५) मूर्ख । (६) मछली । (७) एक पुस्तक के पाठ में "लालच" है । (८) चीख़ता है । (९) लड़कों को कान छेदते समय हाथ में कुछ मीठा दे देते हैं जिस में तवज्जह दर्द की तरफ़ न जाय ।

ज्यूँ कोउ कंचन छार[1] मिलावत,
 ले करि पत्थर सूँ नग फोरै।
सुंदर या नरदेह अमूलक,
 तीर लगी नवका[2] कित बोरै ॥ २० ॥

देखन के नर सोभत हैं जस,
 आहि अनूपम केलि[3] कु खंभा।
भीतर तौ कछु सार नहीं पुनि,
 ऊपर छीलक[4] अंबर[5] दंभा[6] ॥
बोलत है परि नाहिं कछू सुधि,
 ज्यूँहि बयार तैं बाजत कुंभा[7] ।
खाँसि रहे कपि[8] ज्यूँ छिन माहिं सु,
 याही तैं सुंदर होत अचंभा ॥ २१ ॥

देखन के नर दीसत हैं परि,
 लच्छन तौ पसु के सबही हैं।
बोलत चालत पीवत खात सु,
 वे घर वे बन जात सही हैं ॥
प्रात गये रजनी[9] फिरि आवत,
 सुंदर यूं नित भार वही है।
और तु लच्छन आइ मिले सब,
 एक कमी सिर स्रृंग[10] नहीं हैं ॥ २२ ॥

प्रेत भयो कि पिसाच भयो,
 कि निसाचर[11] सो जितही तित डोलै।

(१) राख। (२) नाव। (३) केला। (४) छिलका। (५) कपड़ा। (६) परदा। (७) घड़ा। (८) बंदर। (९) रात। (१०) सींग। (११) राक्षस।

तू अपनी सुधि भूलि गयो,
मुख तैं कछु और की औरहि बोलै ॥
सोइ उपाय करै जु मरै पचि,
बंधन तौ कबहूँ नहिँ खोलै ।
सुंदर जा तनु मैं हरि पावत,
सो तनु नास कियो मति भोलै ॥ २३ ॥

पेट तैं बाहर होतहि बालक,
आइ के मातु पयोधर[1] पीनो ।
मोह बँध्यो दिनहीं दिन और,
तरुण[2] भयो तिय के रस भीनो ॥
पुत्र प्रपुत्र बँध्यो परिवार सु,
ऐसिहि भाँति गये पन[3] तीनौं ।
सुंदर राम को नाम बिसारि के,
आपहि आप कूँ बंधन कीनो ॥ २४ ॥

मातु पिता सुत भाई बँध्यो,
युवती के कहे कहा काम करै है ।
चोरि करै बटपारि[4] करै,
किरषी[5] बनिजो करि पेट भरै है ॥
सीत[6] सहै सिर घाम सहै,
कहि सुंदर सो रण माँझ मरै है ।
बाँधि रह्यो ममता सब सूँ नर,
याही तैं बंध्यो हि बंध फिरै है ॥ २५ ॥

(१) छाती । (२) जवान । (३) अवस्था । (४) लुटेरूपन । (५) खेती । (६) जाड़ा ।

तू ठगि के धन और कूँ ल्यावत,
तेरउ तौ घर औरहि फोरै ।
आग लगै सबही जरि जाइ सु,
तू दमरी दमरी करि जोरै ॥
हाकिम को डर नाहिंन सूझत,
सुंदर एक हि बार निचोरै ।
तू खरचै नहिं आप न खाय सु,
तेरिहि चातुरि तोहि ले चोरै ॥ २६ ॥

॥ मनहर छन्द ॥

करत प्रपंच इन पंचनि के बस पस्यो,
परदारा[१] रत भय न आनत बुराई को ।
परधन हरै परजीव की करत घात,
मद्य मांस खाय लवलेस न भलाई को ॥
होयगो हिसाब तब मुख तैं न आवै ज्वाब,
सुंदर कहत लेखो लेत राई राई को ।
इहाँ तौ कियो बिलास जम की न तोहिं त्रास,
उहाँ तो नहीं है कछु राज पोपाबाई[२] को ॥ २७ ॥
दुनिया कूँ दौड़ता है औरत कूँ लोढ़ता[३] है,
औजूद[४] कूँ मोड़ता है बटोही सराय का ।
मुरगी कूँ मोसता है बकरी कूँ रोसता[५] है,
गरीब कूँ खौंसता है बेमिहर[६] गाइ का ॥
जुलम कूँ करता है धनी सूँ न डरता है,
दोजख कूँ भरता है खजाना बलाइ का ।

(१) परस्त्री । (२) पाखंडी बातैं । (३) लालसा करता । (४) शरीर । (५) पकाता । (६) निर्दई ।

होयगा हिसाब तब आवैगा न ज्वाब कछू,
सुंदर कहत गुन्हेगार है खुदाइ का ॥ २८ ॥
कर कर आयो जब खर खर काढ्यो नार,
भर भर बाज्यो ढोल घर घर जान्यो है ।
दर दर दौर्यो जाय नर नर आगे दीन,
बर बर बकत न नेक अलसान्यो है ॥
सर सर सोधै धन तर तर तोरै पान,
जर जर काटत अधिक मोद[1] मान्यो है ।
फर फर फूल्यो फिरै डर डरपै न मूढ़,
हर हर हँसत न सुंदर सकान्यो है ॥ २९ ॥
जनम सिरान्यो[2] जाइ भजन बिमुख सठ,
काहे कूँ भवन कूप बिन मीच मरै है ।
गहत अविद्या जानि सुक-नलिनी[3] ज्यूँ मूढ़,
कर्म औ बिकर्म करै करत न डरै है ॥
आपही तैं जात अंध नरक मैं बार बार,
अजहूँ न संक मन माहिं अब करै है ।
दुक्ख को समूह अवलोकि[4] के न त्रास[5] होइ,
सुंदर कहत नर नाग पास[6] परै है ॥ ३० ॥
झूठो जग ऐन सुन नित्य गुरु बैन देखे,
आपने हूं नैन तेऊँ अंध रहे ज्वानी मैं ।
केते राव राजा रंक भये रहे चले गये,
मिलि गये धूर माहीं आये ते कहानी मैं ।

---

(१) हर्ष । (२) बीता । (३) तोता के फँसाने की कल । (४) देखकर ।
(५) डर । (६) फाँस ।

सुंदर कहत अब ताहि न सुरत आवै,
चेतै क्यौं न मूढ़ चित लाय हिरदानी मैं ॥
भूले जन दाँव जात लोह कैसो ताव जात,
आयु जात ऐसे जैसे नाव जात पानी मैं ॥ ३१ ॥
जग मग पग तजि सजि भजि राम नाम,
काम क्रोध तन मन घेरि घेरि मारिये ।
झूठ मूठ हठ त्याग जाग भाग सुनि पुनि,
गुण ज्ञान आनि आन वारि वारि[1] डारिये ॥
गहि ताहि जाहि सेस ईस ससि[2] सुर[3] नर,
और बात हेतु तात फेरि फेरि जाइये ।
सुंदर दरद खोइ धोइ धोइ बार बार,
सार संग रंग अंग हेरि हेरि धारिये ॥ ३२ ॥

॥ दुर्मिला छंद ॥

हठ जोग धरो तन जात भिया,
हरि नाम बिना मुख धूरि परै ।
सठ सोग हरो छिन गात किया,
चरि चाम दिना मुख पूरि जरै ॥
भट भोग परो घन घात धिया,
अरि काम किना सुख जूरि मरै ।
मठ रोग करो धन धात हिया,
परि राम तिना दुख दूरि करै ॥ ३३ ॥
गुर ज्ञान गहै अति सोइ सुखी,
मन मोह तजै सब काज सरै ।

(१) न्योछावर करके । (२) चाँद । (३) देवता ।

धुर ध्यान रहै पति खोइ मुखी,
रण लोह बजै तव लाज परै ॥
सुर तानन है हति दोइ दुखी,
तनु छोह सजे अब आज मरै ।
पुर थान लहै मति घोइ रुखी,
जन वोह रजै जव राज करै ॥ ३४ ॥

काहे को फिरत नर भटकत ठौर ठौर,
डागुले की दौर देवी देव सब जानिये ।
जोग जज्ञ जप तप तीरथ ब्रतादिकनि,
तिनहूँ को फल सोऊ मिथ्याई बखानिये ॥
सकल उपाइ तजि एक राम राम भजि,
याही उपदेस सुनि हृदै माहीं आनिये ।
ताही तैं समुझि करि सुंदर बिस्वास धरि,
और कोऊ कहे कछू ता की नहिं मानिये ॥ ३५ ॥

संत सदा उपदेस बतावत, केस सबै सिर स्वेत भये हैं ।
तू ममता अजहूँ नहिं छाड़त, मौतहु आय सँदेस दये हैं ॥
आज कि काल्ह चलै उठि मूरख, तेरे तो देखत केते गये हैं ।
सुंदर क्यौं नहिं राम सँभारत, या जग मैं कहो कौन रहे हैं ॥ ३६

इति उपदेश चिंतामणि को अंग संपूर्ण ॥ २ ॥

३—काल चिंतामणि को अंग ।

॥ इंदव छंद ॥

मंदिर महल खिलायत हैं गज,
ऊँट दमामा दिना इक दो हैं ।

तातहु मात तिया सुत बांधव,
देख धुँ पामर होत बिछोहैं[१] ॥
झूठ प्रपंच सूँ राचि रह्यो सठ,
काठ की पूतरि ज्यूँ कपि मोहै ।
मेरिहि मेरि कहै नित सुंदर,
आँखि लगे कहि कौन कूँ को है ॥ १ ॥
ये मम देस बिलायत है गज,
ये मम मंदिर ये मम थाती[२] ।
ये मम मातु पिता पुनि बंधव,
ये मम पूत सु ये मम नाती ॥
ये मम कामिनि केलि[३] करै नित,
ये मम सेवक हैँ दिन राती ।
सुंदर वैसेहि छाड़ि गयो सब,
तेल जस्यो सु बुझी जब बाती ॥ २ ॥
ते दिन चारि विराम[४] लियो सठ,
तेरे कहे कछु है गई तेरी ।
जैसहि बाप ददा गये छाड़ि सु,
मारिहै तू तजिहै पल फेरी ॥
मारिहै काल चपेट अचानक,
होइ घरीक[५] मैँ राख की ढेरी ।
सुंदर ले न चलै कछु ये सँग,
भूलि कहै नर मेरिहि मेरी ॥ ३ ॥
कै यह देह जराइ के छार,
किया कि किया कि किया कि किया है ।

---

(१) जुदाई । (२) धरोहर, पूँजी । (३) बिलास । (४) बिश्राम । (५) घड़ी एक ।

कै यह देह जमीं महिं गाड़ि,
दिया कि दिया कि दिया कि दिया है ॥
कै यह देह रहै दिन चारि,
जिया कि जिया कि जिया कि जिया है ।
सुंदर काल अचानक आइ,
लिया कि लिया कि लिया कि लिया है ॥ ४ ॥

देह सनेह न छाड़त है नर,
जानत है थिर है यह देहा ।
छीजत जाय घटै दिनही दिन,
दीसत है घट को नित छेहा[१] ॥
काल अचानक आइ गहै कर,
ढाहि गिराइ करै तनु खेहा[२] ॥
सुंदर जानि यहै निहचै धरि,
एक निरंजन सूं करि नेहा ॥ ५ ॥

तू कछु और बिचारत है नर,
तेरो बिचार धर्‍योहि रहैगो ।
कोटि उपाय करै धन के हित,
भाग लिख्यो तितनोहि लहैगो ॥
भोर कि साँझ घरी पल माँझ सु,
काल अचानक आइ गहैगो ।
राम भज्यो न कियो कछु सुकिरत,
सुंदर यूँ पछताइ रहैगो ॥ ६ ॥
भूलि गयो हरि नाम कूँ तू सठ,
देख धौं कौन सँजोग बन्यो है ।

(१) अंत । (२) धूल ।

काल अचानक आइ गहे कँठ,
पेख धुँ झूँठहि तानो तन्यो है ॥
छार करै सब धाम कूँ लूटि ।
अनादि कूँ ऐसहि जीव हन्यो है ।
कोउ न होत सहाय कुटुंब,
अनादि को सुंदर यूँहिँ सुन्यो है ॥ ७ ॥
बीत गये पिछले सबही दिन,
आवत हैँ अगले दिन नेरे ।
काल महा बलवंत बड़ो रिपु,
साधि रह्यो सर[1] ऊपर तेरे ॥
एक घरी महँ मारि गिरावत,
लागत ताहि कछू नहिँ बेरे ।
सुंदर संत पुकारि कहै सब,
हूँ पुनि तोहि कहूँ अब टेरे ॥ ८ ॥
सोइ रह्यो कहाँ गाफिल ह्वै करि,
तो सिर ऊपर काल दहारै[2] ॥
धामस धूमस लागि रह्यो सठ,
आइ अचानक तोहिँ पछारै ।
ज्यूँ बन मैँ मृग कूदत फाँदत,
चित्र गले नख सूँ उर फारै ॥
सुंदर काल डरै जिनके डर,
ता प्रभु कूँ कहु क्यूँ न सँभारै ॥ ९ ॥
चेतत क्यूँ न अचेतन औंघत,
काल सदा सिर ऊपर गाजै ।

(१) तीर । (२) ज़ोर से पुकारता है ।

रोकि रहै गढ़ के सब द्वारनि,
तू तब कौन गली ह्वै भाजै ॥
आइ अचानक केस गहै जब,
पाकरिकै पुनि तोहि जु लाजै ।
सुंदर कौन सहाय करै जब,
मुंडहि मुंड भराभर बाजै ॥ १० ॥
तू अति गाफिल होइ रह्यो सठ,
कुंजर[1] ज्यूँ कछु संक न आनै ॥
माय[2] नहीं तनु मैं अपनो बल,
मत्त भयो बिषया सुख ठानै ॥
खोसत खात सबै दिन बीतत,
नीति अनीति कछू नहिं जानै ।
सुंदर केहरि[3] काल महा रिपु,
दंत उखारि कुँभस्थल भानै[4] ॥ ११ ॥
मातु पिता युवती सुत बांधव,
आइ मिल्यो इन से सम्बंधा ।
स्वारथ के अपने अपने सब,
सो यह नाहिन जानत अंधा ॥
कर्म बिकर्म करै तिन के हित,
भार धरै नित आपुन कंधा ।
अंत बिछोह[5] भयो सब सूँ पुनि,
याही तैं सुंदर है जग अंधा ॥ १२ ॥

॥ मनरह छंद ॥

करत करत धंध, कछुहि न जानै अंध।
आवत निकट दिन, आगलै चपाक[6] दैं ॥

(१) हाथी। (२) समाय। (३) बाघ, शेर। (४) सिर तोड़े। (५) जुदाई। (६) अचानक।

जैसे बाज तीतर कूँ, दाबत है अचानक।
जैसे बक मछरी कूँ, लीलत लपाक दैं॥
जैसे मच्छिका[1] को घात, मकरी करत आय।
जैसे साँप मूषक[2] को, ग्रसत गपाक दैं॥
चेत रे अचेत नर, सुंदर सम्हार राम।
ऐसे तोहि काल आय, लेइगो टपाक दैं॥ १३॥

मेरो देह मेरो गेह,[3] मेरो परिवार सब।
मेरो धन माल मैं तो, बहु बिधि भारो हौं॥
मेरे सब सेवक, हुकुम कोऊ मेटै नाहिं।
मेरी युवती[4] के मैं तो, अधिक पियारो हौं॥
मेरो बंस ऊँचो, मेरे बाप दादा ऐसे भये।
करत बड़ाई मैं तो, जगत उजारो हौं॥
सुंदर कहत मेरो मेरो, करि जानै सठ।
ऐसे नहिं जानै मैं तो, कालही को चारो[5] हौं॥१४॥

जब तें जनम धर्‌यो, तबही तें भूलि पर्‌यो।
बालापन माहिं भूल्यो, समझो न रुख[6] मैं॥
जोबन[7] भयो है जब, काम बस भयो तब।
युवती[8] सूँ एकमेक, भूल रह्यो सुख मैं॥
पुत्रहु प्रपुत्र भये, भूल्यो तब मोह बाँधि।
चिंता करि करि भूल्यो, जानै नहिं दुख मैं॥
सुंदर कहत सठ, तीनूँ पन माहिं भूल्यो।
अंत पुनि जाइ पर्‌यो, कालहि के मुख मैं॥ १५॥

---

(१) मक्खी। (२) चूहा। (३) घर। (४) स्त्री। (५) खुराक। (६) अवस्था। (७) जवानी। (८) सुंदरी।

उठत बैठत काल, जागत सोवत काल।
चलत फिरत काल, काल उर धँस्यो है ॥
कहत सुनत काल, खातहूँ पिवत काल।
कालहि के गाल माहिँ, हर हर हँस्यो है ॥
तात मात बंधु काल, सुत दारा गृह काल।
सकल कुटुंब काल, काल जाल फँस्यो है ॥
सुंदर कहत एक, राम बिन सब काल।
कालही को कृत्य कियो, अंत काल ग्रस्यो है ॥१६॥

जब तेँ जनम लेत, तबही तेँ आयु घटै।
माई सोँ कहत मेरो, बड़ो होत जात है ॥
आज और काल्ह और, दिन दिन होत और।
दौर्‌यो दौर्‌यो फिरत, खेलत अरु खात है ॥
बालपन बीत्यो जब, जोबन लग्यो है आइ।
जोबनहुँ बीते बूढ़ो, डोकरो दिखात है ॥
सुंदर कहत ऐसे, देखतही बूझि गयो।
तेल घटि गये जैसे, दीपक बुझात है ॥ १७ ॥

सब कोउ ऐसे कहैँ, काल हम काटत हैँ।
काल तो अखंड नास, सब को करतु है ॥
जा के भय ब्रह्मा पुनि, होत है कंपायमान।
जा के भय सुरासुर, इंद्रहू डरतु है ॥
जा के भय सिव अरु, सेसनाग तीनोँ लोक।
केइक[1] कल्प[2] बीते, लोमस[3] परतु है ॥

(१) कई एक। (२) ब्रह्मा का एक दिन। (३) एक ऋषि का नाम जिन को अमर कहत हैँ।

सुंदर कहत नर, गरब[१] गुमान करै ।
तू ता सठ एकही पलक मैं मरतु है ॥ १८ ॥
काल सम बलवंत, कोऊ नहिं देखियत ।
सब को करत अंत, काल महा जोर है ॥
कालही को डर सुनि, भग्यो मूसा पैगंबर।
जहाँ जहाँ जाइ, तहाँ तहाँ वा को घोर[२] है ॥
काल भयानक भयभीत, सब किये लोक ।
स्वर्ग मृत्यु पाताल मैं, कालहि को सोर है ॥
कालहि को काल एक, सुंदर अखंड ब्रह्म ।
वा सूँ काल डरै जोई, चल्यो वहि ओर है ॥१९॥
वरषा भये तैं जैसे, बोलत भमीरी[३] स्वर ।
खंड न परत कहूँ, नेकहू न जानिये ॥
जैसे पोंगी[४] बाजत, अखंड स्वर होत पुनि।
ताहू मैं न अंतर, अनेक राग गानिये ॥
जैसे कोई गुड्डी[५] कूँ, चढ़ावत गगन माहिं।
ताहु की सूँ धुनि सुनि, वैसेही बखानिये ॥
सुंदर कहत तैसे, काल को प्रचंड बेग ।
रात दिन चल्यो जाइ, अचरज मानिये ॥ २० ॥
माया जोरि जोरि नर, राखत जतन करि ।
कहत है एक दिन, मेरे काम आइहै ॥
तोहिं तो मरत कछु, बेर नहीं लागै सठ ।
देखतही देखत, बबूला[६] सोँ बिलाइहै ॥

(१) अभिमान । (२) शोर । (३) झींगुर । (४) मदारियोँ का बाजा जिसे तुमड़ी बोलते हैँ । (५) पतंग । (६) पानी का बुलबुला ।

धन तो धर्‍योही रहै, चलत न कौड़ी गहै।
रीते[1] हाथन से, जैसो आयो तैसो जाइ है॥
करि ले सुकृत यह बेरिया न आवै फिरि।
सुन्दर कहत नर, पुनि पछताइहै॥ २१॥
बावरो सु भयो फिरै, बावरीही बात करै।
बावरो ज्यूँ देत वायु, लागत बुरानो है॥
माया को उपाय जानै, माया की चातुरी ठानैं।
माया मैं मगन अति, माया लपटानो है॥
जोबन के मद मातो, गिनत न कोऊ नातो।
काम बस कामिनी के, हाथही बिकानो है॥
अतिहि भयो बेहाल, सूझत न माथे काल।
सुंदर कहत ऐसो, और को दिवानो है॥ २२॥
झूठो धन झूठो धाम, झूठो सुख झूठो काम।
झूठी देह झूठो नाम, धरि के भुलायो है॥
झूठो तात[2] झूठी मात, झूठो सुत दारा[3] भ्रात।
झूठो हित मानि मानि, झूठो मन लायो है॥
झूठो लेन झूठो देन, झूठो मुख बोलै बैन।
झूठे झूठे करै फैन, झूठही कूँ धायो है॥
झूठही मैं एतो भयो, झूठही मैं पचि गयो।
सुंदर कहत साच, कबहूँ न आयो है॥ २३॥

॥ दीर्घाक्षर-कबित्त ॥

झूठे हाथी झूठे घोरा, झूठा आगे झूठा दौरा।
झूठा बाँधा झूठा छोरा, झूठा राजा रानी है॥

(१) खाली। (२) पिता। (३) स्त्री।

झूठी काया झूठी माया, झूठा झूठे धंधे लाया ।
झूठा मूवा झूठा जीया, झूठी या की बानी है ॥
झूठा सोवै झूठा जागै, झूठा जूझै झूठा भागै ।
झूठा पीछे झूठा आगे, झूठे झूठी मानी है ॥
झूठा लीया झूठा दीया, झूठा खाया झूठा पीया ।
झूठा सौदा झूठा कीया, ऐसा झूठा प्रानी है ॥२४॥

॥ मनहर छंद ॥

झूठ यूँ बँध्यो है जाल, ताही तैं ग्रसत काल ।
काल बिकराल ब्याल[1], सबही कूँ खात है ॥
नदी को प्रबाह[2] चल्यो, जात है समुद्र माहिं ।
तैसे जग कालही के, मुख मैं समात है ॥
देह सूँ ममत्व ता तैं, काल को भय मानत है ।
ज्ञान उपजे तैं वह कालहू बिलात है ॥
सुंदर कहत परब्रह्म है सदा अखंड ।
आदि मध्य अंत एक, सोई ठहरात है ॥ २५ ॥

॥ इंदव छंद ॥

काल उपावत[3] काल खपावत,
काल मिलावत है गहि माटी ।
काल हलावत काल चलावत,
काल सिखावत है सब आटी ॥
काल बुलावत काल भुलावत,
काल डुलावत[4] है बन घाटी ।
सुंदर काल मिटे जबही पुनि,
ब्रह्म बिचार पढ़ै जब पाटी ॥ २६ ॥

इति काल चिंतामणि को अंग संपूर्ण ॥ ३ ॥

(१) सर्प । (२) बहाव, धारा । (३) उत्पन्न करता है । (४) एक पुस्तक में "डुबावत" है ।

४—देह आत्मा बिछोह को अंग।

॥ इंद्व छंद ॥

वे स्रवणा रसना मुख वैसहि,
वैसहि नासिका वैसहि अंखो[1]।
वे कर वे पग वे सब द्वार सु,
वे नख सीसहि रोम असंखो॥
वैसहि देह परी पुनि दीसत,
एक बिना सब लागत खंखो[2]॥
सुंदर कोऊ न जानि सकै यह,
बोलत हो सु कहाँ गयो पंखो॥ १॥

बोलत चालत पीवत खावत,
सींचत है द्रुम[3] कूँ जस माली।
लेतहु देतहु देखत रीझत,
तोरत तान बजावत ताली॥
जा महिँ कर्म विकर्म किये सब,
है यह देह परी अब ठाली।
सुंदर सो कितहूँ नहिँ दीसत[4],
खेल गयो इक खेल सो ख्याली॥ २॥

मातु पिता युवती[5] सुत बांधव,
लागत है सब कूँ अति प्यारो।
लोक कुटुंब खरो हित राखत,
होइ नहीं हम तैं कहुँ न्यारो॥

(१) आँख। (२) खाली। (३) पेड़। (४) दिखाई देती है। (५) स्त्री।

देह सनेह तहाँ लग जानहु,
बोलत है मुख सब्द उचारो।
सुंदर चेतन सक्ति गई जब,
बेगि कहै घरबार निकारो॥ ३॥
रूप भलो तबहीं लग दीसत,
जौं लग बोलत चालत आगे।
पीवत खात सुनै अरु देखत,
सोइ रहै उठि कै पुनि जागे॥
मातु पिता भइया मिलि बैठत,
प्यार करै युवती गल लागे।
सुंदर चेतन सक्ति गई जब,
देखत ताहि सबै डरि भागे॥ ४॥

॥ मनहर छुन्द ॥

कौन भाँति करतार, कियो है सरीर यह।
पावक के माहिं देखौ, पानी को जमावनो॥
नासिका स्रवन नैन, बदन रसन बैन।
हाथ पाँव अंग नख, सीस को बनावनो॥
अजब अनूप रूप, चमक दमक ऊप।
सुंदर सोभित अति, अधिक सुहावनो॥
जाही छिन चेतन, सकति लीन होइ गई।
ताही छिन लागत है, सब कूँ अभावनो[1]॥ ५॥
मृत्तिका[2] को पिंड देह, ताहि मैं जुगुति भई।
नासिका नयन मुख, सरवन बनाये हैं॥
सीस पाँव हाथ अरु, अँगुरी बिराजमान।
अँगुरी के आगे पुनि, नखहु लगाये हैं॥

---

(१) नापसंद। (२) मिट्टी।

पेट पीठ छाती कंठ, चिबुक[1] अधर[2] गाल।
दसन[3] रसन बहु, बचन सुनाये हैं ॥
सुंदर कहत जब, चेतन सकति गई।
वहै देह जारि बारि, छार करि आये हैं ॥ ६ ॥
देह तौ प्रगट यह, ज्यूँ की त्यूँ ही जानियत।
नैन के झरोखे माहिं, झाँकत न देखिये ॥
नाक के झरोखे माहिं, नेक न सुबास लेत।
कान के झरोखे माहिं, सुनत न लेखिये ॥
मुख के झरोखे मैं, न बचन उचार होत।
जीभहू कूँ षट रस, स्वाद न बिसेखिये ॥
सुंदर कहत कोऊ, कौन बिधि जानै ताहि।
पीरो कारो काहू द्वारा, जातो हू न पेखिये[4] ॥७॥
मातु तौ पुकार छाती, कूटि कूटि रोवति है।
बापहू कहत मेरो, नंदन कहाँ गयो ॥
भैयाहू कहत मेरी बाँह आजु टूरि भई।
बहिन कहति मेरो बीर दुख दे गयो ॥
कामिनी कहत मेरो सीस सिरताज कहाँ।
उन्हैं ततकाल[5] रोइ, हाथ मैं धोरा लयो[6] ॥
सुंदर कहत कोऊ, ताहि नहिँ जानि सकै।
बोलत हुतो सो यह, छिन मैं कहाँ गयो ॥ ८ ॥
रज[7] अरु बीरज को, प्रथम सँजोग भयो।
चेतन सकति तब, कौन भाँति आई है ॥

(१) ठोड़ी। (२) होठ। (३) दाँत। (४) देखिये। (५) शीघ्र। (६) दूसरा पाठ कड़ी का यों है—"उन ततकाल हाय खाय रँड़ापो लयो"। (७) रज स्त्री में और वीर्य्य पुरुष में होता है।

कोऊ एक कहत बीज, मध्यही कियो प्रवेस।
किनहुक पंचमास, पीछे कै सुनाई है ॥
देह को बियोग जब, देखतही होइ गयो।
तब कोऊ कहो कहाँ जाइ के समाई है ॥
पंडित रिषीसुर, तपीसुर मुनीसुर हू।
सुंदर कहत यह किनहूँ न पाई है ॥ ९ ॥
तब लौं ही क्रिया सब, होत है बिबिधि भाँति।
जब लग घट माहिं, चेतन परकास है ॥
देह के असक्त[१] भये, क्रिया सब थकी जाय।
जब लग स्वास चलै, तब लग आस है ॥
स्वासहू थक्यो है जब, रोवन लगे हैं तब।
सब कोउ कहैं अब, भयो घट नास है ॥
काहू नहिं देख्यो किहिं, ओर किन कहाँ गयो।
सुंदर कहत यही, बड़ोही तमास है ॥ १० ॥
देह तो सुरूप तो लौं, जो लौं है अरूप माहिं।
सब कोउ आदर, करत सनमान है ॥
टेढ़ी पाग बाँधि बार बारही मरोरै मूछ।
बाँहहू सँवारै अति, धरत गुमान है ॥
देस देसही के लोग, आय के हुजूर[२] होईं।
बैठि करि तखत, कहावै सुलतान है ॥
सुंदर कहत जब, चेतन सकति गई।
उहै देह ताकी कोऊ, मानत न आन[३] है ॥ ११ ॥

इति देह आत्मा बिछोह को अंग संपूर्ण ॥ ४ ॥

---

(१) शिथिल। (२) हाज़िर (३) दबाव, हुक्म।

५-तृष्णा को अंग ।

॥ इंदव छंद ॥

नैनन की पलही पल में छिन,
आधि घरी घटिका जु गई है ।
जाग गयो युग याम गयो पुनि,
साँझ गई तब रात भई है ।
आज गई अरु काल्ह गई,
परसों तरसों कछु और ठई है ।
सुंदर ऐसहि आयु गई,
तृस्ना दिनही दिन होत नई है ॥ १ ॥

॥ दुर्मिला छंद ॥

कनही कन कूँ बिललात फिरै,
सठ याचत है जनही जन कूँ ।
तनही तन कूँ अति सोच करै,
नर खात रहै अनही अन कूँ ।
मनही मन की तृस्ना न मिटी,
पुनि धावत है धनही धन कूँ ।
छिनही छिन सुंदर आयु घटी,
कबहूँ न गया बनहीं बन कूँ ॥ २ ॥

॥ इंदव छंद ॥

जो दस बीस पचास भये सत[1],
होइ हजार तु लाख मँगैगी ।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य,
पृथ्वीपति[2] होन की चाह जगैगी ॥

---

(१) सौ । (२) राजा ।

स्वर्ग पताल को राज करौं,
तृस्ना अधिकी अति आग लगैगी।
सुंदर एक सँतोष बिना सठ,
तेरी तो भूख कभी न भगैगी ॥ ३ ॥
लाख करोर अरब्ब खरब्बनि,
नील पदम्म तहाँ लगि बाढ़ी।
जोरिहि जोर भँडार भरे सब,
और रही सु जमीं तर गाढ़ी[१]।
तौहु न तोहिं सँतोष भयो सठ,
सुंदर तैं तृस्ना नहिं काढ़ी।
सूझत नाहिंन कालहि तो सिर,
मारि के थाप मिलाइहि माढ़ी[२] ॥ ४ ॥
भूख लिये दसहूँ दिसि दौरत,
ताहि तैं तू कबहूँ न अघैहै।
भूख भँडार भरै नहिं कैसहु,
जो धन मेरु सुमेरु लौं पैहै।
तू अब आगेहि हाथ पसारत,
याहि तैं हाथ कछू नहिं ऐहै।
सुंदर क्यूँ नहिं तोष करै नर,
खाइ के खाइ कितोइक खैहै ॥ ५ ॥
भूख नचावत रंकहि[३] रावहि[४],
भूख नचाइ के बिस्व[५] बिगोई।

(१) गाड़ी। (२) मिट्टी। (३) दरिद्री। (४) राजा। (५) संसार।

भूख नचावत इंद्र सुरासुर[1],
और अनेक जहाँ लग जोई ।
भूख नचावत है अध ऊर्धहिं,
तीनहु लोक गिनै कहा कोई ।
सुंदर जाइ तहाँ दुखही दुख,
ज्ञान बिना न कहूँ सुख होई ॥ ६ ॥
पेट पसार दियो जितही तित,
तैं यह भूख कितोइक थापी ।
ओर न छोर कछू नहिं आवत,
मैं बहु भाँति भली बिधि मापी ।
देखत देह भये सब जीरन,
तू नित नूतन आहि अद्यापी ।
सुंदर तोहिं सदा समुझावत,
हे तृस्ना अजहूँ नहिं धापी ॥ ७ ॥
तीनहुं लोक अहार कियो सब,
सात समुद्र पियो पुनि पानी ।
और जहाँ तहँ ताकत डोलत,
काढ़त आँख डरावत प्रानी ।
दाँत दिखावत जीभ हलावत,
याहि तैं मैं यह डाकिनि जानी ।
सुंदर खात भये कितने दिन,
हे तृस्ना अजहूँ न अघानी ॥ ८ ॥
पाँव पताल परे गये नीकसि,
सीस गयो असमान अँधेरो ।

(१) देवता दैत्य ।

हाथ दसो दिसि कूँ पसरे पुनि,
पेट भरे न समुद्र सुमेरो ॥
तीनहु लोक लिये मुख भीतर,
आँखिहु कान बँधे चहुँ फेरो ।
सुंदर देह धर्‌यो अति दीरघ,
हे तृस्ना कछु छेह[१] न तेरो ॥ ९ ॥
बाद बृथा भटके निसि बासर[२],
दूर कियो कबहूँ नहिं धोखा ।
तू हत्यारिनि पापिनि कोढ़िनि,
साच कहूँ मत मानहु रोषा[३] ॥
तोहिं मिलै तब ते होइ बंधन,
तू मरिहै तबहीं होइ मोषा ।
सुंदर और कहा कहिये तोहिं,
हे तृस्ना अब तौं करि तोषा[४] ॥ १० ॥
क्यूँ जग माहिं फिरै भ्रख मारत,
स्वारथ कौन परी जिहि जो लै ।
ज्यूँ हरियाइ गऊ नहिं मानत,
दूध दुह्यो कछु सो पुनि ढोलै ॥
तू अति चंचल हाथ न आवत,
नीकस जाइ नहीं मुख बोलै ।
सुंदर तोहि कह्यो कितनी बिर[५],
हे तृस्ना अब तू मत डोलै ॥ ११ ॥

---

(१) अंत । (२) रात दिन । (३) क्रोध । (४) संतोष । (५) बेर ।

तैं कोइ कान धरी नहिं एकहु,
  बोलत बोलत पेटहि पाक्यो ।
हूं कछु बात बनाइ कहूं जब,
  तैं तब पीसत ही सब फाँक्यो ॥
केतक द्यौस भये परबोधत[१],
  तैं अब आगेहि कूं रथ हाँक्यो ।
सुंदर सीख गई सबही चलि,
  हे तृस्ना कहि के तुहि थाक्यो ॥ १२ ॥
तूही भ्रमाय प्रदेस पठावत,
  बूड़त जाय समुद्रहि झाजा[२] ।
तूही भ्रमाय पहाड़ चढ़ावत,
  बाद बृथा मरि जाइ अकाजा ॥
तैं सब लोक भ्रमाय भली बिधि,
  भाँड किये सब रंकहु राजा ।
सुंदर तोहिं दुखाइ कहूँ अब,
  हे तृस्ना तोहि नेकु न लाजा ॥ १३ ॥

इति तृष्णा को अंग संपूर्ण ॥ ५ ॥

६—धीरज उराहने को अंग ।

॥ इंदव छन्द

पाँव दिये चलने फिरने कहँ,
  हाथ दिये हरि कृत्य[३] करायो ।
कान दिये सुनिये हरि को जस,
  नैन दिये तिन मार्ग दिखायो ॥

(१) कितनेही दिन तुझे समझाते बीते । (२) जहाज़ । (३) सेवा

नाक दिये मुख सोभत ता करि,
जीभ दई हरि को गुण गायो ।
सुंदर साज दियो परमेसुर,
पेट दियो बड़ पाप लगायो ॥ १ ॥
कूप भरै अरु वापि[१] भरै पुनि,
ताल भरै बरषा ऋतु तीनोँ ।
कोठि भरै घट[२] माट[३] भरै घर,
हाट भरै सबही भरि लीन्हो ॥
खंडक[४] खास बखार[५] भरै परि,
पेट भरै न बड़ोदर[६] दीन्हो ।
सुंदर रीतिहु रीति रहै यह,
कौन खडा[७] परमेसुर कीन्हो ॥ २ ॥

॥ मनहर छुन्द ॥

किधौँ पेट चूल्हो कीधौँ भाठि किधौँ भाड़ आहि ।
जोइ कछु झोँकिये, सु सब जरि जातु है ॥
किधौँ पेट थल किधौँ, वापि[८] किधौँ सागर है ।
जेतो जल परै तेतो, सकल समातु है ॥
किधौँ पेट दैत किधौँ, भूत प्रेत राच्छस है ।
खाउँ खाउँ करै कछु, नेक न अघातु है ॥
सुंदर कहत प्रभु, कौन पाप लायो पेट ।
जबही जनम भयो, तबही को खातु है ॥ ३ ॥
विग्रह[९] तौ विग्रह करत अति बार बार ।
तन पुनि तनक न कबहूँ अघायो है ॥

---

(१) बावली । (२) घड़ा । (३) मटका । (४) खंदक, भारी गड़हा । (५) कोठी । (६) बड़ा पेट । (७) गड़हा । (८) बावड़ी । (९) लड़ाई ।

घट न भरत क्यूँही, घट्यो ही रहत नित।
सरीर सिराई मैं तौ, कबहुं न खायो है॥
देह देह कहतही, कहत जनम बीत्यो।
पिंड पिंड काज, निसि दिन ललचायो है॥
पुद्गल गलत, गलत न तृपत होइ।
सुंदर कहत बपु[1], कौन पाप लायो है॥ ४॥
पाजी पेट काज, कोटवाल के अधीन होइ।
कोटवाल सो तो, सिकदार आगे दीन है॥
सिकदार दीवान के, पीछे लग्यो डोलै पुनि।
दीवानहु जाय पातसाह आगे लीन है॥
पातसाह कहै या खुदाय मुझे और देइ।
पेटही पसारे वही पेट बस कीन्ह है॥
सुंदर कहत प्रभु, क्यूँही नहीं भरै पेट।
एक पेट काज एक एक के अधीन है॥ ५॥
तैं तो प्रभु पेट दियो, जगत नचायो जिन।
पेटही के लिये घर घर द्वार फिर्‌यो है॥
पेटही के लिये हाथ जोरि आगे ठाढ़ो होइ।
जोई जोई कह्यो, सोई सोई उन कर्‌यो है॥
पेटही के लिये पुनि, मेघ सीन घाम सहै।
पेटही के लिये जाइ, रण माँहि मर्‌यो है॥
सुंदर कहत इन पेट, सब भाँड किये।
और गैल[2] छूटै पर, पेट गैल पर्‌यो है॥ ६॥

(१) शरीर। (२) रास्ता।

पेट सौं न बली जा के, आगे सब हारि चले।
राव अरु रंक एक, पेट जीति लिये है॥
कोऊ बाघ मारत, बिदारत[१] है कुंजर[२] कूँ।
ऐसे सूर बीर पेट काज प्राण दिये हैं॥
जंत्र मंत्र साधत, आराधत[३] मसान जाइ।
पेट आगे डरत, निडर ऐसे हिये हैं॥
देवता असुर भूत, प्रेत तीनूं लोक पुनि।
सुंदर कहत प्रभु, पेट जेर[४] किये हैं॥ ७॥
प्रातही उठत जब, पेटही की चिंता तब।
सब कोऊ जात, आपु आपु के अहार कूँ॥
कोऊ अन्न खात पुनि, आमिष[५] भखत कोऊ।
कोऊ घास चरत, चरत कोऊ दारु[६] कूँ॥
कोऊ मोती फल कोऊ, वासरस पय[७] पान।
कोऊ पौन पीवत भरत पेट भार कूँ॥
सुंदर कहत प्रभु, पेटही भ्रमाय सब।
पेट तुम दियो है जगत होन ख्वार[८] कूँ॥ ८॥

॥ इंदव छन्द ॥

पेटहि कारण जीव हने बहु, पेटहि मांस भखै रु सुरा[९] पी।
पेटहि लेकर चोरि करावत, पेटहि कूँ गठरी गहि कापी॥
पेटहि पास[१०] गरे महँ डारत, पेटहि डारत कूप रु वापी[११]।
सुंदर काहि कूँ पेट दियो प्रभु, पेटसौं और नहीं कोइ पापी॥९

---

(१) फाड़ना। (२) हाथी (३) पूजन। (४) परास्त। (५) मांस। (६) लकड़ी। (७) दूध। (८) ख़राब, फ़ज़ीहत। (९) शराब। (१०) फाँसी। (११) बावड़ी।

औरन कूँ प्रभु पेट दियो तुम, तेरे तो पेट कहूँ नहिं दीसै।
ए भटकाइ दिये दसहूँ दिस, कोउक राँधत कोउक पीसै ॥
पेटहि कारण नाचत हैं सब, ज्यूँ घरही घर नाचत कीसै[1]।
सुंदर आप न खावहु पीवहु, कौन करी इन ऊपर रीसै[2] ॥१०

॥ मनहर छन्द ॥

काहे कूँ काहू के आगे, जाइ के अधीन होइ।
दीन दीन बचन उचार, मुख कहते ॥
जिन कूँ तौ मद अरु गरब[3] गुमान अति।
तिन के कठोर बैन, कबहूँ न सहते ॥
तुम्हरेही भजन सूँ, मन लवलीन अति।
सकल कूँ त्यागि के, एकांत जाइ गहते ॥
सुंदर कहत यह, तुमही लगायो पाप।
पेट न हुतो तौ प्रभु, बैठे हम रहते ॥ ११ ॥
पेटही के बस रंक, पेटही के बस राव।
पेटही के बस और, खान[4] सुलतान है ॥
पेटही के बस जोगी, जंगम सन्यासी सेख।
पेटही के बस बनबासी खात पान है ॥
पेटही के बस ऋषि मुनि तपधारी सब।
पेटही के बस सिद्ध, साधक सुजान है ॥
सुंदर कहत नहीं, काहू को गुमान रहै।
पेटही के बस प्रभु, सकल जहान है ॥ १२ ॥

इति धैर्य उराहन को अंग संपूर्ण ॥ ६ ॥

---

(१) बंदर। (२) क्रोध। (३) अभिमान। (४) खानखानाँ।

७---विश्वास को अंग।

॥ इंदव छंद ॥

होइ निचिंत करै मत चिंतहिँ, चोँच दई सोइ चिंत करैगो।
पाउँ पसार पस्यो किन सोवत, पेट दियो सोइ पेट भरैगो॥
जीव जिते जल के थल के पुनि, पाहन मेँ पहुँचाय धरैगो।
भूखहि भूख पुकारत है नर, सुंदर तू कह भूख मरैगो॥ १॥
धीरज धारि बिचार निरंतर, तोहि रच्यो सोइ आपुहि ऐहै।
जेतिक भूख लगी घट प्राणहिँ, तेतिक तू अनयासहि पैहै॥
जो मन मैँ तृस्ना करि धावत, तौ तिहुँ लोक न खात अघैहै।
सुंदर तू मत सोच करै कछु, चोँच दई जिन चूनहि दैहै॥ २॥
नेक न धीरज धारत है नर, आतुर होइ दसो दिस धावै।
ज्यूँ पसु खैँचि तुरावत बंधन, जौँ लगि नीर अहार न आवै॥
जानत नाहिँ महामति मूरख, जा घर द्वार धनी पहुँचावै।
सुंदर आप कियो घट भाजन[1], सो भरि है मत सोच उपावै॥३
भाजन आप घड़े[2] जितने, भरिहैँ भरिहैँ भरिहैँ भरिहैँ जू।
गावत हैँ जिनके गुण कूँ, ढरिहैँ ढरिहैँ ढरिहैँ ढरिहैँ जू॥
आदिहु अंतहु मध्य सदा, हरिहैँ हरिहैँ हरिहैँ हरिहैँ जू।
सुंदरदास सहाय सही, करिहैँ करिहैँ करिहैँ करिहैँ जू॥४॥
काहि कुँ दौरत है दसहूँ दिसि, तूँ नर देख कियो हरि जू को।
बैठि रहै दुरि के मुख मूँदि, उघारत दाँत खवाइ है टूको॥
गर्भ थके प्रतिपाल करी जिन, होइ रह्यो तबही जड़ मूको।
सुंदर क्यौँ बिललात फिरै अब, राख हृदय बिस्वास प्रभू को॥५

(१) बरतन। (२) गढ़े।

जा दिन तैं गर्भ बास तज्यो नर, आइ अहार लियो तबही को ।
खातहि खात भये इतने दिन, जानत नाहिँ न भूख कही को ॥
दौरत ध्यावत पेट दिखावत, तू सठ कीट सदा अनही को ।
सुंदर क्यौँ बिस्वास न राखत, सो प्रभु बिस्वभरै सबही को ॥६

खेचर[1] भूचर[2] जे जल के चर, देत अहार चराचर पोखै ।
वे हरि जो सब को प्रतिपालत, ज्यूँ जिहि भाँति तिही बिधि तोखै ॥
तू अब क्यूँ बिस्वास न राखत, भूलत है कित धोखहि धोखे।
तोहिँ तहाँ पहुँचाय रहै प्रभु, सुंदर बैठि रहै किन ओखे ॥ ७

॥ मनहर छंद ॥

काहे कूँ बघूरा[3] भयो, फिरत अज्ञानी नर ।
तेरो तो रिजक[4] तेरे, घर बैठे आइ है ॥
भावै तू सुमेरु जाइ, भावै जाइ मारुदेस ।
जितनोक भाग्य लिख्यो, तितनोक पाइ है ॥
कूप माँझ भरि भावै, सागर के तीर भर ।
जितनोक भाँडो[5] नीर तितनो समाइ है ॥
ताहि तैं संतोष करि, सुंदर बिस्वास धरि ।
जितनो रच्यो है घट, सोई जु भराइ है ॥ ८ ॥
काहे कूँ फिरत नर, दीन भयो घर घर ।
देखियत तेरो तो, अहार इक सेर है ॥
जा को देह सागर मैँ, सुन्यो सतजोजन[6] को ।
ताहू कूँ तो देत प्रभु, या मैँ नहिँ फेर है ॥
भूख्यो कोउ रहत न जानिये जगत माहिँ ।
कोरी अरु कुंजर, सबनही कूँ दे रहै ॥

(१) आकाश के चलने वाले । (२) पृथ्वी के चलने वाले । (३) बगुला । (४) आहार । (५) बर्तन । (६) चारसैा कोस ।

सुंदर कहत बिस्वास, क्यूँ न राखै सठ ।
बार बार समझाय कह्यो केती बेर है ॥ ९ ॥
तेरे तो अधीरज तूँ, आगिलीहि चिंत करै ।
आज तौ भस्यो है पेट, काल कैसी होइ है ॥
भूख्योही पुकारे अरु, दिन उठि खातो जाइ ।
अतिही अज्ञानी जाकी मति गई खोइ है ॥
ताकूँ नहिँ जानै सठ, जा को नाम बिस्वंभर[1] ।
जहाँ तहाँ प्रगट सबनि, देत सोइ है ॥
सुंदर कहत तोहिँ, वा को तौ भरोसो नाहिँ ।
एक बिस्वास बिन, याही भाँति रोइ है ॥ १० ॥
देख धौँ सकल बिस्व, भरत भरनहार ।
चूँच के समान चून, सबही कूँ देत है ॥
कीट पसु पंछी अजगर मच्छ कच्छ पुनि ।
उनके न सौदा कोऊ, न तौ कछु खेत है ॥
पेटही के काज रात दिवस भ्रमत सठ ।
मैं तो जान्यो नीके करि, तू तौ कोऊ प्रेत है ॥
मानुष सरीर पाय, करत है हाय हाय ।
सुंदर कहत नर, तेरे सिर रेत है ॥ ११ ॥
तू तो भयो बावरो, उतावरो फिरत अति ।
प्रभु को बिस्वास गहि, काहे न रहतु है ॥
तेरो जो रिजक है सो, आइ है सहज माहिँ ।
यूँही चिंता करि करि, देह कूँ दहतु है ॥
जिन यह नख सिख, साजि के सँवास्यो तोहिँ ।
अपने किये की वह, लाज कूँ वहतु है ॥

(१) संसार का पालनेवाला ।

काहे कूँ अज्ञानी कछु, सोच मन माहिँ करै,
भूख्यो तू कदै न रहै, सुंदर कहतु है ॥ १२ ॥
जगत मैं आ के, बिसार्‍यो है जगतपति,
जगत कियो है सोई, जगत भरतु है।
तेरे निसि दिन चिंता, औरहि परी है आइ,
उद्यम अनेक, भाँति भाँति के करतु है ॥
इत उत जाय के, कमाई करि लाऊँ कछु,
नेक न अज्ञानी नर, धीरज धरतु है।
सुंदर कहत एक, प्रभु के बिस्वास बिन,
बादहि कूँ बृथा सठ, पचि के मरतु है ॥ १३ ॥

इति विश्वास को अंग संपूर्ण ॥ ७ ॥

८—देह मलीन के गर्बप्रहार को अंग ।

॥ मनहर छंद ॥

देह तौ मलिन अति, बहुत बिकार भरि,
ताहू माहिँ जरा व्याधि, सब दुख रासी है।
कबहूँक पेट पीर कबहूँक सिर वाय,
कबहूँक आँख कान मुख मैं विथा[1] सी है ॥
औरहू अनेक रोग नख सिख पूरि रहे,
कबहूँक स्वास चलै कबहूँक खाँसी है।
ऐसो ये सरीर ताहि अपनो कै मानत है,
सुंदर कहत या मैं कौन सुख बासी है ॥ १ ॥
जा सरीर माहिँ तू अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू बिचार या मैं कौन बात भली है।
मेद मज्जा मांस रग रग मैं रकत भर्‍यो,
पेटहू पिटारी सी मैं ठौर ठौर मली है ॥

(१) दर्द।

हाड़न सूँ भस्यो मुख हाड़न के नैन नाक,
हाथ पाउँ सोऊ सब हाड़न की नली है।
सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार[1] भरी ऊपर तौ कली है ॥ २ ॥

॥ इंदव छंद ॥

हाड़ को पिंजर चाम मढ़्यो सब,
माहिँ भस्यो मल मूत्र बिकारा।
थूक रु लार परै मुख तैं पुनि,
व्याधि बहै सब औरहु द्वारा ॥
मांस की जीभ सूँ खाय सबै कछु,
ताहि तैं ता को है कौन बिचारा।
ऐसे सरीर में पैठि के सुंदर,
कैसे के कीजिये सौच अचारा ॥ ३ ॥
थूक रु लार भस्यो मुख दीसत,
आँखि में गीडर[2] नाक में सेढ़ो[3]।
औरहु द्वार मलीन रहै अति,
हाड़ रु माँस के भीतर भेढ़ो[4] ॥
ऐसे सरीर मैं बास कियो सब,
एक से दीसत ब्राह्मण ढेढ़ो[5]।
सुंदर गर्ब कहा इतने पर,
काहेकूँ तू नर चालत टेढ़ो ॥ ४ ॥
जा दिन गर्भ सँजोग भयो जब,
ता दिन बूँद छिया हुती ताहीं।

(१) कूड़ा। (२) कीचड़। (३) भैंभन। (४) खून। (५) सूद्र।

द्वादस मास अधोमुख[1] झूलत,
बूड़ि रह्यो पुनि वा रस माहीं ॥
ता रज बीरज की यह देह सो,
तू अब चालत देखत छाहीं ।
सुंदर गर्ब गुमान कहा सठ,
आपनि आदि बिचारत नाहीं ॥ ५ ॥

इति देह मलीन के गर्वप्रहार को अंग संपूर्ण ॥ ८ ॥

९--नारीनिंदा को अंग ।

॥ मनहर छंद ॥

कामिनी को तनु मानु कहिये सघन बन,
वहाँ कोऊ जाय सो तौ भूलेही परतु है ।
कुंजर है गति कटि केहरी को भय जा में,
बेनी[2] काली नागिनी ऊ फनि कूँ धरतु है ॥
कुच हैं पहार जहाँ काम चोर रहै तहाँ,
साधि के कटाच्छ बान, प्रान कूँ हरतु है ।
सुंदर कहत एक और डर जा में अति,
राच्छसी बदन खाँउ खाँउ ही करतु है ॥ १ ॥
बिषही की भूमि माहिं बिष के अंकुर भये,
नारी बिष बेली बढ़ी नखसिख देखिये ।
बिषही के जर मूल बिषही के डार पात,
बिषही के फूल फल लागे जु बिसेखिये[3] ॥
बिष के तंतू[4] पसार उरझाइ आँटी[5] मार,
सब नर ब्रृच्छ पर लपटेही लेखिये ।

(१) नीचे सिर और ऊपर पाँव । (२) गुथे बाल या चोटी । (३) विशेष करके । (४) डोरा । (५) गाँठ ।

सुंदर कहत कोऊ संत तरु बचि गये,
तिनके तौ कहूँ लता लागी नहिँ पेखिये ॥ २ ॥
उदर मेँ नरक नरक अध द्वारन मेँ,
कुचन[1] मेँ नरक नरक भरी छाती है ।
कंठ मेँ नरक गाल चिबुक[2] नरक किंब[3],
मुख मैँ नरक जीभ, लालहु चुचाती है ॥
नाक मैँ नरक आँख, कान मैँ नरक बहै,
हाथ पाँउ नख सिख, नरक दिखाती है ।
सुंदर कहत नारी, नरक को कुंड यह,
नरक मेँ जाइ परै, सो नरकपाती है ॥ ३ ॥
कामिनी को अंग अति, मलिन महा असुद्ध,
रोमरोम मलिन, मलिन सब द्वार है ।
हाड़ माँस मज्जा मेद, चाम सूँ लपेटि राखै,
ठौर ठौर रकत के, भरेई भंडार[4] हैँ ॥
मूत्रहू पुरीष[5] आँत, एकमेक मिलि रही,
औरही उदर माहिँ, बिबिधि बिकार है ।
सुंदर कहत नारी, नखसिख निन्दा रूप,
ताहि जो सराहै सो तौ, बड़ोई गँवार है ॥ ४ ॥

॥ कुंडलिया छंद ॥

रसिक प्रियारस मंजरी, और सिँगारहि जान ।
चतुराई करि बहुत बिधि, बिषय बनाई आन ॥
बिषय बनाई आन, लगत बिषयिन[6] कूँ प्यारी ।
जागे मदन[7] प्रचंड, सराहै नखसिख नारी ॥

---

(१) स्तन । (२) ठोड़ी । (३) मन्था । (४) ख़ज़ाना, कोश । (५) मल । (६) कामी । (७) कामदेव ।

ज्यूँ रोगी मिष्टान खाइ, रोगहि बिस्तारै ।
सुंदर ये गति होइ, जोइ रसिक प्रिया धारै ॥ ५ ॥
रसिक प्रिया के सुनतही, उपजै बहुत बिकार ।
जो या माहीं चित धरै, वहै होत नर ख्वार ॥
वहै होत नर ख्वार, वार तो कबहुँ न लागै ।
सुनत बिषय की बात, लहर बिषही की जागै ॥
ज्यूँ कोउ ऊँघ्यो[1] हुतो, लेइ पुनि सेज बिछाई ।
सुंदर ऐसी जान, सुनत रसिक प्रिया भाई ॥ ६ ॥

इति नारी निंदा को अंग संपूर्ण ॥ ६ ॥

१०—दुष्टजन को अंग

॥ मनहर छन्द ॥

अपने न दोष देखे, पर के औगुण पेखे,
दुष्ट को सुभाव, उठि निंदाही करतु है ।
जैसे कोई महल, सँवारि राख्यो नीके करि,
कीरी[2] तहाँ जाय, छिद्र ढूँढत फिरतु है ॥
भोरही तैं साँझ लग, साँझही तैं भोर लग,
सुंदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है ।
पाँव के तरे की, नहीं सूझै आग मूरख कूँ,
और सूँ कहत तेरे, सिर पै बरतु है ॥ १ ॥

॥ इंदव छंद ॥

घात अनेक रहै उर अंतर,
दुष्ट कहै मुख सूँ अति मीठी ।

(१) निंद्रामा । (२) चींटी ।

लोटत पोटत व्याघ्रहि[१] ज्यूँ नित,
 ताकत है पुनि ताहि कि पीठी ॥
ऊपर तैं छिरकै जल आन सु,
 हेठ[२] लगावत जारि अँगीठी ।
या महिं कूर[३] कछू मति जानहु,
 सुंदर आपुनि आँखिनि दीठी ॥ २ ॥
आपनु काज सँवारन के हित,
 और कु काज बिगारत जाई ।
आपनु कारज होउ न होउ,
 बुरो करि और कु डारत भाई ॥
आपहु खोवत औरहु खोवत,
 खोइ दुनौं घर देत बहाई ।
सुंदर देखतही बनि आवत,
 दुष्ट करै नहिँ कौन बुराई ॥ ३ ॥
ज्यूँ नर पोषत है निज देहहि,
 अन्न बिनास करै तिहिँ बारा ।
ज्यूँ अहि और मनुष्यहि काटत,
 वाहि कछू नहिँ होत अहारा ॥
ज्यूँ पुनि पावक जारि सबै कछु,
 आपहि नास भयो निरधारा ।
त्यूँ यह सुंदर दुष्ट सुभावहु,
 जानि तजो किन तीन प्रकारा ॥ ४ ॥
सर्प डसै सु नहीं कछु तालुक,
 बीछू लगै सु भले करि मानौ ।

(१) बाघ । (२) तले । (३) झूठा ।

सिंहहु खाय तु नाहिँ कछू डर,
जो गज मारत तौ नहिँ हानौ ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ,
गिरि जाइ गिरौ कछु भै मत आनौ ।
सुंदर और भले सबही यह,
दुर्जन संग भलो जिनि जानो ॥ ५ ॥

इति दुष्टजन को अंग संपूर्ण ॥ १० ॥

११—मन को अंग

॥ मनहर छंद ॥

हटकि हटकि मन, राखत जु छिन छिन,
सटकि सटकि चहुँ ओर अब जातु है ।
लटकि लटकि, ललचाय लोल[1] बार बार,
गटकि गटकि करि, बिष फल खातु है ॥
झटकि झटकि तार, तोरत करम हीन,
भटकि भटकि कहूँ, नेक न अघातु है ।
पटकि पटकि सिर, सुंदर जु मानि हारि,
फिटकि फिटकि जाइ, सूधो कौन बातु है ॥ १ ॥
पलही मैँ मरि जाय, पलही मैँ जीवतु है,
पलही मैँ पर हाथ, देखत बिकानो है ।
पलही मैँ फिरै, नवखंडहू ब्रह्मांड सब,
देख्यो अनदेख्यो सो तो, या तैँ नहिँ छानो[2] है ॥
जातो नहिँ जानियत, आवतो न दीसै कछु,
ऐसेसी बलाइ अब, ता सूँ पस्योपानो[3] है ।

---

(१) चोँच । (२) छिपा । (३) वास्ता, पाला ।

सुंदर कहत या की, गतिहू न लखि परै,
मन की प्रतीत कोऊ, करै सो दिवानो है ॥ २ ॥
घेरिये तौ घेरयोहू, न आवत है मेरो पूत,
जोई परबोधिये सो, कान न धरतु है।
नीति न अनीति देखै, सुभ न असुभ पेखै,
पलही मैं होती अनहोती हू करतु है ॥
गुरु की न साधु की न लोक वेदहू की संक,
काहू की न मानै न तो काहू तैं डरतु है।
सुंदर कहत ताहि, धीजिये[1] सु कैान भाँति,
मन को सुभाव कछु, कह्यो न परतु है ॥ ३ ॥
काम जब जागै तब, गिनत न कोऊ संक[2],
जानै सब जोई[3] करि, देखत न मा धो[4] है।
क्रोध जब जागै तब, नेकु न सँभारि सकै,
ऐसी बिधि मूल की, अविद्या[5] जिन साधी है ॥
लोभ जब जागै तब, तृपति न क्यूँही होइ,
सुंदर कहत इन, ऐसेही मैं खाधी है।
मोह मतवारो निसि दिनही फिरत रहै,
मन सो न कहूँ हम, देख्यो अपराधी है ॥ ४ ॥
देखिबे कूँ दैारै तो, अटकि जाइ वाही ओर,
सुनिबे कूँ दैारै तो, रसिक सिरताज है।
सूँघिबे कूँ दैारै तो, अघाय न सुगंध करि,
खाइबे कूँ दैारै तो, न धापै महाराज है ॥
भोगही कूँ दैारै तो, तृपति नहीं होइ क्यूँहीं,
सुंदर कहत याही, नेकही न लाज है।

---

(१) पतियाइये। (२) डर। (३) जोरू। (४) लड़की। (५) मूर्खता।

काहू को न कह्यो करै आपनोही टेक धरै,
मन सो न कोऊ हम देख्यो दगाबाज है ॥ ५ ॥
देखै न कुठौर ठौर कहन और की और,
लीन जाइ होत हाड़ माँस औ रकत मैं ।
करत बुराई सर औसर न जानै कछु,
धक्का आइ देत राम नाम सूँ लगत मैं ॥
बहाये सुरासुर बहाये सब भेषीजन,
सुंदर कहत दिन घालत भगत मैं ।
औरहू अनेक, अँतराईही करत रहै,
मन सो न कोऊ है अधम या जगत मैं ॥ ६ ॥
जिन ठगे संकर बिधाता[1] इंद्र देव मुनि,
आपनोहू अधिपति[2] ठग्यो जिन चंद है ।
और जोगी जंगम सन्यासी सेष कौन गिनै,
सबनि कूँ ठगत ठगावे न सुछंद[3] है ॥
तपीसुर ऋषीसुर सब पचि पचि गये,
काहू के न आवै हाथ ऐसो या पै बंद है ।
सुंदर कहत बस कौन बिधि कीजै ताहि,
मन सो न कोऊ या जगत माहिँ रिंद है ॥ ७ ॥
रंक कूँ नचावै अभिलाख धन पाइबे की,
निसि दिन सोच करि ऐसेही पचत है ।
राजाही नचावै सब भूमि ही को राज लेवै,
औरहू नचावे जोई देह सूँ रचत है ॥
देवता असुर सिद्ध पन्नग[4] सकल लोक,
कीट पसु पच्छी कहु कैसे कै बचत है ।

(१) ब्रह्मा । (२) मालिक । (३) खुदमुख़्तार । (४) नाग ।

सुंदर कहत काहू, संत की कहो न जाय ।
मन के नचाये सब, जगत नचत है ॥ ८ ॥

॥ इंदव छंद ॥

केतक द्यौस[१] भये समुझावत ,
नेक न मानत है मन भौंडू[२] ।
फूलि रह्यो बिषया सुख में कछु ,
और न जानत है सठ दौंडू ॥
आँखि न कान न नाक बिना सिर ,
हाथ न पाँव नहीं मुख पौंडू ।
सुंदर ताहि गहै कहु क्यूँकरि ,
नीकसि जाइ बड़ो मन लौंडू ॥ ९ ॥

दौरत है दसहू दिस कूँ सठ,
वायु लग्यो तब तैं भयो बैंडा ।
लाज न कान कछू नहिं राखत ,
सील सुभाव को फोरत भैंडा ॥
सुंदर सीख कहा कहि दीजिय ,
भेदत बान न छेदत गैंडा ।
लालच लागि रह्यो मन बीखर ,
बारहबाट आठरहैं पैंडा ॥ १० ॥

स्वान[३] कहूँ कि सियार कहूँ ,
कि बिलाइ कहूँ मन की मति तैसो ।
ढेढ़ कहूँ किधौं डूम कहूँ किधौं ,
भाँड कहूँ कि भँडाई है जैसो ॥

(१) दिन । (२) मूर्ख । (३) कुत्ता

चोर कहूँ बटपार कहूँ ठग,
जार कहूँ उपमा कहूँ कैसो।
सुंदर और कहा कहिये अब,
या मन की गति दीसत ऐसो ॥ ११ ॥
कै बेर तू मन रंक भयो सठ,
माँगत भीख दसो दिस डूल्यो।
कै बेर तू मन छत्र धस्यो सिर,
कामिनि संग हिंडोरन झूल्यो ॥
कै बेर तू मन छीन भयो अति,
कै बेर तू सुख पाय के फूल्यो।
सुंदर कै बेर तोहिं कह्यो मन,
कौन गली किहि मारग भूल्यो ॥ १२ ॥
इंद्रिन के सुख चाहत है मन,
लालच लागि भ्रमै सठ यूँही।
देखि मरीचि[1] भस्यो जल पूरन,
धावत है मृग मूरख ज्यूँही ॥
प्रेत पिसाच निसाचर डोलत,
भूख मरै नहिं धावत क्यूँही।
वायु बघूरहि कौन गहै कर,
सुंदर दौरत है मन त्यूँही ॥ १३ ॥
है सब को सिरताज ततच्छिन।
जो अभिअंतर ज्ञान बिचारै ॥
जो कछु और बिषै सुख बंछत,
तौ यह देह अमोलक हारै।

(१) किरन—मृगतृष्णा से अभिप्राय

छाँडि कुबुद्धि भजै भगवंतहि ,
आपु तरै पुनि औरहि तारै ॥
सुंदर तोहि कह्यो कितनो बिर ,
तू मन क्यूँ नहिं आपु सँभारै ॥ १४ ॥

कौन सुभाव पर्यो उठि दौरत ,
अमृत छाँडि चिचोरत हाड़े ।
ज्यूँ भ्रम की हथनी दृग देखत ,
आतुर होइ परै गज खाडे[1] ॥
बाद वृथा भटकै निसि बासर ,
एकहु सीख लगी नहिं राँडे ।
सुंदर तोहि सदा समुझावत ,
रे मन तू भ्रम वोकि न छाँड़े ॥ १५ ॥

जो मन नारि कि ओर निहारत ,
तौ मन होत है ताहि को रूपा ।
जो मन काहु सुँ क्रोध करै पुनि ,
तौ मन है तबही तदरूपा[2] ॥
जो मन मायहि माया रटै नित ,
तो मन बूड़त माया के कूपा ।
सुंदर जो मन ब्रह्म बिचारत ,
तौ मन होत है ब्रह्म स्वरूपा ॥ १६ ॥

॥ मनहर छंद ॥

कबहुँक हँसि उठे, कबहुँक रोइ देत ।
कबहुँ बकत कहुँ, अंतहू न लहिये ॥

(१) गड़हे में । (२) सदृश ।

कबहुँक खाइ तौ अघात नहिँ काहू करि ।
कबहुँक कहै मेरे, कछु नहिँ चहिये ॥
कबहुँ आकास जाइ, कबहुँ पाताल जाइ ।
सुंदर कहत ताहि, कैसे करि गहिये ॥
कबहुँक आय लगै, कबहूँ उतर भगै ।
भूत के से चिन्ह करै, ऐसो मन कहिये ॥ १७ ॥
कबहुँ तौ पाँख को, परेवा के दिखावै मन ।
कबहुँक धूर के, चावर करि लेत है ॥
कबहुँ तौ गुटिका, उछारत आकास ओर ।
कबहुँ तौ राते पीरे, रंग स्याम सेत है ॥
कबहुँ तौ आँब कूँ, उगाइ करि ठाढ़ो करै ।
कबहुँ तौ सीस धर, जुदे करि देत है ॥
बाजीगर ख्याल ऐसो, सुंदर कहत मन ।
सदाही भ्रमत रहै, ऐसो कोऊ प्रेत है ॥ १८ ॥
कबहुँक साधु होत, कबहुँक चोर होत ।
कबहुँक राजा होत, कबहुँक रंक सो ॥
कबहुँक दीन होत, कबहूँ गुमानी होत ।
कबहुँक सूधो होत, कबहुँक बंक[१] सो ॥
कबहुँक कामी होत, कबहुँक जती होत ।
कबहूँ निर्मल होत, कबहुँक पंक[२] सो ॥
मन को सरूप ऐसो, सुंदर फटिक जैसो ।
कबहुँक सूर होत, कबहूँ मयंक[३] सो ॥ १९ ॥
हाथी कोसो कान किधौं, पीपर को पात किधौं ।
ध्वजा को उड़ान कहूँ, थिर न रहतु है ॥

(१) टेढ़ा । (२) चहला । (३) चन्द्रमा ।

पानी को सो घेर किधौं, पौन उरझेर[१] किधौं ।
चक्र को सो फेर कोउ, कैसे के गहतु है ॥
रहट की माल किधौं, चरखा को ख्याल किधौं ।
फेरी खातो बाल कछु, सुधि न लहतु है ॥
धूम को सो धाव ता को, राखिबे को चाव ऐसो ।
मन को सुभाव सो तौ, सुंदर कहतु है ॥ २० ॥

सुख मानै दुख मानै, संपति ब्रिपति मानै ।
हर्ष मानै सोक मानै, मानै रंक धन है ॥
घटि मानै बढ़ि मानै, सुभहू असुभ मानै ।
लाभ मानै हानि मानै, याही तैं कृपण[२] है ॥
पाप मानै पुन्न मानै, उत्तम मध्यम मानै ।
नीच मानै ऊँच मानै, मानै मेरो तन है ॥
स्वर्ग मानै नर्क मानै, बंध मानै मोच्छ मान ।
सुंदर सकल मानै, ता तैं नाम मन है ॥ २१ ॥

जोई जोई देखै कछु, सोई सोई मन आहि ।
जोई जोई सुनै सोई, मनही को भर्म है ॥
जोई जोई सूँघै, जोई खावै जो सपर्स[३] होइ ।
जोई जोई करै सोई, मनही को कर्म है ॥
जोई जोई गहै, जोई त्यागै जोई अनुरागै[४] ।
जहाँ जहाँ जाइ सोई, मनहीं को सर्म[५] है ॥
जोई जोई कहै सोई, सकल सुंदर मन ।
जोई जोई कल्पै[६] सोई, मनहीं को धर्म है ॥२२॥

---

(१) झकोला । (२) सूम । (३) छूना । (४) चाहै । (५) परिश्रम । (६) कल्पना करै ।

एकही बिटप[1] बिस्व, ज्यूँ को त्यूँ ही देखियत ।
अतिहि सघन ता के, पत्र फल फूल है ॥
आगले झरत पात, नये नये होत जात ।
ऐसे याही तरु को, अनादी काल मूल है ॥
दसचार लोक लौं, पसरि रह्यौ जहाँ तहाँ ।
अरध उरध पुनि, सूच्छम रु स्थूल है ॥
कोऊ तो कहत सत, कोऊ तो कहै असत ।
सुंदर कहत भ्रमही को, मन मूल है ॥ २३ ॥
तो सो न कपूत कोऊ, कितहूँ न देखियत ।
तो सो न सपूत कोऊ, देखियत और है ॥
तूही आप भूलै महा, नीचहू तैं नीच होइ ।
तूही आप जानै तो, सकल सिर मौर है ॥
तूही आप भ्रमै तब, जगत भ्रमत देखै ।
तेरे स्थित भये सब, ठौर ही को ठौर है ॥
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है अकासवत ।
सुंदर कहत मन, तेरी सब दौर है ॥ २४ ॥
मनहीं के भ्रम तैं, जगत यह देखियत ।
मनहीं के भ्रम गये, जगत बिलात है ॥
मनहीं के भ्रम, जेवरी मैं उपजत साँप ।
मन के बिचारे साँप, जेवरी समात है ॥
मनहीं के भ्रम तैं, मरीचिका[2] कूँ जल कहै ।
मनहीं के भ्रम सीप, रूपो सो दिखात है ॥
सुंदर सकल यह, दीसै मनहीं को भ्रम ।
मनहीं को भ्रम गये, ब्रह्म होइ जात है ॥ २५ ॥

(१) पेड़ । (२) किरन— मृगतृष्णा से अभिप्राय है ।

मनहीं जगत रूप होइ करि बिस्तर्यो ।
मनहीं अलख[1] रूप जगत सूँ न्यारो है ॥
मनहीं सकल घट ब्यापक अखंड एक ।
मनहीं सकल यह, जगत पियारो है ॥
मनहीं आकासवत, हाथ न परत कछु ।
मन के न रूप रेख, बृद्ध हीन बारो[2] है ॥
सुंदर कहत परमारथ बिचारै जब ।
मन मिटि जाइ एक ब्रह्म निज सारो[3] है ॥ २६ ॥

इति मन को अंग संपूर्ण ॥ ११ ॥

१२–चाणक को अंग ।

॥ मनहर छंद ॥

जोई जोई छूटिबे को, करत उपाय अज्ञ[4] ।
सोई सोई दृढ़ करि, बंधन परतु है ॥
जोग जज्ञ जप तप, तीरथ ब्रतादि और ।
झंपापात लेत जाइ, हिमाले गरतु है ॥
कानहुँ फराई पुनि, केसहु लुचाई अंग ।
बिभूति लगाई सिर, जटाहु धरतु है ॥
बिना ज्ञान पाये नहिँ छूटत हृदय ग्रंथी ।
सुंदर कहत यूँही, भ्रमि के मरतु है ॥ १ ॥

॥ सर्व लघु अक्षर ॥

जप तप करत धरत ब्रत जत सत ।
मन बच क्रम भ्रम कष्ट सहत तन ॥

---

(१) अदृश्य । (२) बालक । (३) सत्य । (४) मूर्ख ।

वलकल[१] वसन[२] असन[३] फल पत्र जल ।
कसत रसन[४] रस तजत बसत बन ॥
जरत मरत नर गरत परत सर ।
कहत लहत हय[५] गज दल[६] बल घन ॥
पचत पचत भव भय न टरत सठ ।
घट घट प्रगट रहत न लखत जन ॥ २ ॥

॥ पूर्ववत् ॥

जोग करै जज्ञ करै, वेद बिधि त्याग करै ।
जप करै तप करै, यूँही आयु[७] खूटि[८] है ॥
यम[९] करै नेम करै, तीरथहूँ ब्रत करै ।
पुहुमी[१०] अटन[११] करै, बृथा स्वास टूटि है ॥
जीवे को जतन करै, मन मैं वासना धरै ।
पचि पचि यूँही मरै, काल सिर कूटिहै ॥
औरहू अनेक बिधि, कोटिक उपाय करै ।
सुंदर कहत बिन ज्ञान नहीं छूटिहै ॥ ३ ॥
बुद्धि करि हीन नर, रज तम छाय रह्यो ।
बन बन फिरत, उदास होइ घर तैं ॥
कठिन तपस्या धरि, मेघ सीत घाम सहै ।
कंद मूल खाइ कोऊ, कामना के डर तैं ॥
अतिही अज्ञान उर, बिबिधि उपाय करै ।
निजरूप भूलि के, बँधत जाइ पर तैं ॥
सुंदर कहत औंधी ओर[१२] कैसे दीखै मुख ।
हाथ माहिँ आरसी, न फेरै मूढ़ कर तैं ॥ ४ ॥

(१) भोजपत्र । (२) वस्त्र । (३) भोजन । (४) जीभ । (५) घोड़ा । (६) फ़ौज । (७) उमर । (८) बीतनी । (९) संजम । (१०) पृथ्वी । (११) फिरना । (१२) उलटी तरफ़ ।

मेघ सहै सीत सहै, सीस पर घाम सहै।
कठिन तपस्या करि, कंद मूल खात है॥
जोग करै जज्ञ करै, तीरथ रु ब्रत करै।
पुन्न नाना बिधि करै, मन मैं सुहात है॥
और देवी देवता, उपासना अनेक करै।
आँबन की हौस कैसे, आक डौंड़े[1] जात है॥
सुंदर कहत एक, रवि के प्रकास बिनु।
जँगना[2] की जोति, कहा रजनी[3] बिलात है॥५॥
कोई फिरै नाँगे पायँ, गुदरी बनाय करि।
देह की दसा दिखाइ, आइ लोक धूत्यो[4] है॥
कोई दूधाहारी होई, कोई फलाहारी होई।
कोई अधोमुख[5] झूलि झूलि धूम[6] घूटयो है॥
कोई नहिं खाय लैाण[7], कोई मुख गहै मैान।
सुंदर कहत यूँही, बृथा भूस कूटयो है॥
प्रभु सूँ तो प्रीति नाहिं, ज्ञान सूँ परिचै नाहिं।
देखो भाई आँधरे ने, ज्यूँ बजार लूटयो है॥६॥

॥ इंदव छन्द ॥

आसन मारि सँवारि जटा नख, उज्जल अंगबिभूति चढ़ाई।
या हमकूँ कछु देहि दया करि, घेरि रहै बहु लोग लुगाई॥
कोउक उत्तम भोजन ल्यावत, कोउक ल्यावत पान मिठाई।
सुंदर लेकरि जात भयो सब, मूरख लोकन या सिधि पाई॥७
ऊरध[8] पाय अधोमुख ह्वै करि, घूटत धूमहिं देह झुलावै।
मेवहु सीतहु घाम सहै सिर, तीनहु काल महा दुख पावै॥

(१) धतूरा की डोंड़ी। (२) जुगनूँ। (३) रात। (४) ठगा। (५) उलटे। (६) धुवाँ। (७) नमक। (८) ऊपर।

हाथ कछू न परै कबहूँ कण, मूरख कूकस[1] कूटि उड़ावै।
सुंदर बंछि यिपै सुख कूँ घर बूड़त है अरु भाँझ ले गावै॥८
गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो पुनि, खेह लगाइ के देह सँवारी।
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समै जु पंचागिनि बारी॥
भूख सहै रहि रूख तरे, पर सुंदरदास सहै दुख भारी।
डासन[2] छाड़ि के कासन ऊपर, आसन मारि पै आस न मारी९
जो कोउ कष्ट करै बहु भाँतिनि, जात अज्ञान नहीं मन केरो।
ज्यूँ तम पूरि रह्यो घर भीतर, कैसहु दूर न होय अँधेरो॥
लाठिनि मारिय ठेलि निकारिय, और उपाय करे बहुतेरो।
सुंदर सूर प्रकास भयो, तब तौ कितहू नहिं देखिय नेरो॥१०
धार बह्यो बड़ धारि रह्यो जल, धार सह्यो गिरि धार गस्यो है।
भार सँच्यो धन भारत मैं कर, भार लह्यो सिर भार पस्यो है॥
भार तप्यो बहि मार गयो जम, मार दई मन तौ न मस्यो है।
सार तज्यो पटसार पस्यो कहि, सुंदर कारज कौन सस्यो है॥११
कोउ भया पय पान करै नित, कोउक खात है अन्न अलौना।
कोउक कष्ट करै निसि वासर, कोउक बैठि के साधत पौना॥
कोउक बाद बिबाद करै अति, कोउक धारि रहै मुख मौना।
सुंदर एक अज्ञान गये बिन, सिद्ध भये नहिं दीसत कौना१२

॥ सवैया छंद ॥

कोउक अंग बिभूति लगावत,
कोउक होत निराट दिगंबर[3]।
कोउक सेत कषायक[4] ओढ़त,
कोउक काथ[5] रँगै बहु अंबर[6]॥

---

(१) भूसी। (२) बिछौना। (३) नंगा। (४) गेरुवा। (५) गुदड़ी। (६) कपड़ा।

कोउक वलकल[1] सीस जटा नख,
कोउक ओढ़त है जु बघंबर ।
सुंदर एक अज्ञान गये बिनु,
ये सब दीसत आहिं अडंबर[2] ॥१३॥

॥ मनहर छंद ॥

आपही के घट मैं प्रगट परमेसुर है,
ताहि छोड़ि भूलैं नर दूर दूर जात है ।
कोई दौरै द्वारिका को कोई कासी जगन्नाथ,
कोई दौरै मथुरा को हरिद्वार न्हात है ॥
कोई दौरै बद्रिका को बिषम पहार चढ़ै,
कोई तो केदार जात मन मैं सुहात है ।
सुंदर कहत गुरुदेव देइ दिव्य नैन,
दूर ही के दूरबिन निकट दिखात है ॥ १४ ॥

॥ इंदव छंद ॥

कोउक जात प्रयाग बनारस,
कोउ गया जगनाथहि धावै ।
कोउ मथुरा बदरी हरिद्वार सु,
कोउ गंगा कुरुछेत्र नहावै ॥
कोउक पुष्कर ह्वै पंचतीरथ,
दौरिहि दौरि जु द्वारका आवै ।
सुंदर वित्त[3] गड़्यो घर माहिं सु,
बाहिर ढूँढत क्यूँ करि पावै ॥ १५ ॥
आगे कछू नहिं हाथ पर्‌यो पुनि,
पीछे बिगारि गयो निज भौना ।

(१) भोजपत्र । (२) पाखंड । (३) धन

ज्यूं कोइ कामिनि कंतहि मारि,
चली सँग औरहि देखि सलोना[1] ॥
सोऊ गयो तजि के ततकाल,
कहे न बनै जु रही मुख मौना ॥
तैसहि सुंदर ज्ञान बिना घर छाड़ि,
भये नर भाँड के दौना ॥ १६ ॥
ज्यूँ कोउ कोस कट्यो नहिं मारग,
तेलि कले घर मैं पसु जोये ।
ज्यूं बनियाँ गयो बीस के तीस कुं,
बीसहु मैं दसहू नहिं होये ॥
ज्यूं कोउ चौबे छब्बे कूँ चल्यो पुनि,
होइ दुबे दुइ गाँठ के खोये ।
तैसहि सुंदर और क्रिया सब,
राम बिना निहचै नर रोये ॥ १७ ॥
ज्यूं कोउ राम बिना नर मूरख,
औरनि के गुण जीभ भनैगी ।
आन क्रिया गढ़ के गढ़वा पुनि,
होतहि बेर कछू न बनैगी ॥
ज्यूँ हथफेरि दिखावत चावर,
अंत तो धूरि कि धूरि छिनैगी ।
सुंदर भूल भई अति से करि,
सूते कि भैंस पड़ाहि जनैगी ॥ १८ ॥
होइ उदास बिचार बिना नर,
गेह तज्यो बन जाइ रह्यो है ।

(१) नमकीन ।

अंबर छाड़ि बघंबर ले करि,
 कै तप को तन कष्ट सह्यो है ॥
आसन मारि सुआसन ह्वै मुख,
 मौन गही मन तौ न गह्यो है ।
सुंदर कौनि कुबुद्धि लगी कहि,
 या भवसागर माहिँ बह्यो है ॥ १९ ॥
भेष धर्‌यो परि भेद न जानत,
 भेद लहे बिन खेदहि[1] पैहै ।
भूखहि मारत नींद निवारत,
 अन्न तजै फल पत्र न खैहै ॥
और उपाय अनेक करै पुनि,
 ताहि तैं हाथ कछू नहिँ ऐहै ।
या नर देह वृथा सठ खोवत,
 सुंदर राम बिना पछितैहै ॥ २० ॥
आपन आपन थान मुकाम,
 सराहन कूँ सब भाँति भली है ।
जज्ञ ब्रतादिक तीरथ दान,
 पुरान कथा जु अनेक चली है ॥
कोटिक और उपाय जहाँ लगि,
 ते सुनि के नर बुद्धि छली है ।
सुंदर ज्ञान बिना न कहूँ सुख,
 भूलन की बहु भाँति गली है ॥ २१ ॥
कोउक चाहत पुत्र धनादिक,
 कोउक चाहत बाँझ जनायो ।

(१ कष्ट ।

कोउक चाहत धातु रसादिक,
कोउक चाहत पार[1] दिखायो ॥
कोउक चाहत जंत्रनि मंत्रनि,
कोउक चाहत रोग गमायो ।
सुंदर राम बिना सबही भ्रम,
देखहु या जग यूँ डहँकायो ॥ २२ ॥
काहे कुँ तूँ नर भेष बनावत,
काहे कुँ तूँ दसहू दिसि डूलै[2] ।
काहे कुँ तूँ तन कष्ट करै अति,
काहे कुँ तूँ मुख तैं कहि फूलै ॥
काहे कुँ और उपाय करै अब,
आन क्रिया करिकै मत भूलै ।
सुंदर एक भजै भगवंतहि,
तौ सुखसागर मैं नित झूलै ॥ २३ ॥

इति चाणक को अंग संपूर्ण ॥ १२ ॥

१३—विपरीतज्ञान को अंग ।

॥ मनहर छन्द ॥

एक ब्रह्म मुख सूँ, बनाय करि कहत है ।
अंतःकरण तौ, बिकारन सूँ भस्यो है ॥
जैसे ठग[3] गोबर को, कूपो भरि राखत है ।
सेर पंच घृत[4] ले के, ऊपर ज्यूँ कस्यो है ॥
जैसे कोई भाँडे माहिं, प्याज कूँ छिपाय राखै
चीथरा कपूर को ले, मुख बाँधि धस्यो है ॥

(१) पारा । (२) फिरै । (३) धूर्त । (४) घी ।

सुंदर कहत ऐसे, ज्ञानी हैँ जगत माहिँ ।
तिन कूँ तौ देखि करि, मेरो मन डस्यो है ॥१॥
देह सूँ ममत्व पुनि, गेह सूँ ममत्व ।
सुत दारा[1] सूँ ममत्व, मन माया मैँ रहतु है ॥
थिरता न लहै जैसे, कंदुक[2] चौगान[3] माहिँ ।
कर्मनि के बस मास्यो धक्का कूँ बहतु है ॥
अंतःकरण सदा जगत सूँ रचि रह्यो ।
मुख सूँ बनाय बात, ब्रह्म की कहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिँ, याहि तैँ अचंभो आहि ।
भूमि पर पस्यो कोउ, चंद कूँ गहतु है ॥ २ ॥
मुख सूँ कहत ज्ञान, भ्रमै मन इंद्री प्रान ।
मारग के जल मैँ न प्रतिबिंब[4] लहिये ॥
गाँठ मैँ न पैसा कोउ, भयो रहै साहुकार ।
बातन मैँ मुहर, रुपैया गिनि लहिये ॥
सुपने मैँ पंचामृत, जीम के तृपत भयो ।
जागे तैँ मरत भूख, खाइबे कूँ चहिये ॥
सुंदर सुभट जैसे, कायर मारत गाल ।
राजा भोज सम कहा, गाँगू तेली कहिये ॥३॥
संसार के सुखनि सूँ, आसक्त अनेक बिधि ।
इंद्रिहु लोलुप[5] मन, कबहुँ न गह्यो है ॥
कहत है ऐसे मैँ तौ, एक ब्रह्म जानत हूँ ।
ताहि तैँ छोड़ि के सुभ कर्मन को रह्यो है ॥
ब्रह्म की न प्राप्ति पुनि, कर्म सब छूटि गये ।
दोउन तैँ भ्रष्ट होइ, अध[6] बिच बह्यो है ॥

(१) स्त्री । (२) गेंद । (३) मैदान । (४) छाया । (५) लोभी । (६) रसातल नरक ।

सुंदर कहत ताहि, त्यागिये स्वपच[1] जैसे ।
याही भाँति ग्रंथ मैं, बसिष्ठजी हूँ कह्यो है ॥४॥
ज्ञानी की सी बात कहैं, मन तौ मलिन रहै ।
बासना अनेक भरि, नेकु न निवारी है ॥
जैसे कोऊ आभूपण[2], अधिक बनाइ राख्यो ।
कलई ऊपर करि, भीतर भँगारी है ॥
ज्यूँही मन आवै त्यूँही, खेलत निसंक होइ ।
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ[3] न बिचारी है ॥
सुंदर कहत वा के, अटक न कोऊ आहि ।
जोई वा सूँ मिलै जाइ, ताही कूँ बिगारी है ॥५॥
हंस स्वेत बक[4] स्वेत, देखिये समान दोऊ ।
हंस मोती चुगै बक मछरी कूँ खात है ॥
पिक[5] अरु काक[6] दोऊ, कैसे करि जाने जायँ ।
पिक अंब डारी काक करकहि जात है ॥
सैंधो[7] अरु फटिक[8], पषान सम देखियत ।
वह तौ कठोर वह जल मैं समात है ॥
सुंदर कहत ज्ञानी बाहिर भीतर सुद्ध ।
ता की पटतर[9] और बातनि की बात है ॥ ६ ॥

इति बिपरीत ज्ञान को अंग संपूर्ण ॥ १३ ॥

१४--बचन बिबेक को अंग ।

॥ मनहर छंद ॥

जा के घर ताजी तुरकिन को तबेलो बाँध्यो ।
ता के आगे फेरि फेरि, टट्टुवा दिखाइये ॥

(१) डोम । (२) गहना । (३) जड़ चैतन्य की गाँठ नहीँ खोली है । (४) बकुला ।
(५) कोयल । (६) कौवा । (७) सेंधा नोन । (८) स्फटिक मणि । (९) उपमा ।

जा के खासा मलमल, साफन[1] के ढेर परे ।
ता के आगे आनि करि, चौसई[2] रखाइये ॥
जा के पंचामृत खात खात सब दिन बीते ।
सुंदर कहत ताहि, राब क्या चखाइये ॥
चतुर प्रबीण आगे, मूरख उच्चार करै ।
सूरज के आगे जैसे, झुँगना[3] दिखाइये ॥ १ ॥

एक बाणी रूपवंत, भूषण बसन अंग ।
अधिक बिराजमान, कहियत ऐसी है ॥
एक बाणी फाटे टूटे, अंबर उढ़ाय आनि ।
ताहू माहिँ बिपरीत[4], सुनियत जैसी है ॥
एक बाणी मृतक सी, बहुत सिँगार किये ।
लोकनि कूँ नीकी लगै, संतन कूँ भय सी है ॥
सुंदर कहत बाणी, त्रिबिधि जगत माहिँ ।
जानै कोई चतुर, प्रबीण जा की जैसी है ॥ २ ॥

राजा को कुँवर जो, सरूप कै कुरूप होइ ।
ता कूँ तौ सलाम करि, गोद ले खिलाइये ॥
और कोउ रैयत[5] को सरूप होइ सोभनीक[6] ।
ताहू कूँ तौ देखि करि, निकट बुलाइये ॥
काहू को कुरूप कारो, कूबरो है अंगहीन ।
वा की ओर देखि देखि, माथोही हलाइये ॥
सुंदर कहत वा के, बापही को प्यारो होई ।
यूँहि जानि बाणी को, बिबेक[7] ऐसे पाइये ॥३॥

---

(१) टसर । (२) गजी । (३) जुगनूँ । (४) उलटा । (५) प्रजा । (६) सुहावना ।
(७) ज्ञान ।

बोलिये तौ तब जब, बोलिबे की सुधि होइ ।
न तौ मुख मौन गहि, चुप होइ रहिये ॥
जोरिये तौ तब जब, जोरिबे की जानि परै ।
तुक छंद अरथ, अनूप जा मैं लहिये ॥
गाइये तौ तब जब, गाइबे को कंठ होइ ।
स्रवण के सुनतही, मन जाइ गहिये ॥
तुक भंग छंद भंग, अरथ मिलै न कछु ।
सुंदर कहत ऐसी, बाणी नहीं कहिये ॥ ४ ॥
एकनि के बचन सुनत अति सुख होइ ।
फूल से झरत हैं, अधिक मनभावने ॥
एकनि के बचन तौ, असि[1] मानौ बरसत ।
स्रवण के सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनि के बचन, कटुक कहु बिषरूप ।
करत मरम छेद, दुक्ख उपजावने ॥
सुंदर कहत घट घट मैं बचन भेद ।
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥ ५ ॥
काक अरु रासभ,[2] उलूक[3] जब बोलत हैं ।
तिन के तौ बचन, सुहात कहु कौन कूँ ॥
कोकिला रु सारी पुनि, सूवा जब बोलत हैं ।
सब कोउ कान दे, सुनत रव[4] रौन[5] कूँ ॥
ताहि तैं सुबचन, बिबेक करि बोलिये जू ।
यूँहि आकबाक बकि, तोरिये न पौन कूँ ॥

(१) तलवार । (२) गधा । (३) उल्लू । (४) शब्द । (५) रसीला ।

सुंदर समुझि ऐसे, बचन उचार करौ ।
नहिं तौ समुझि करि, बैठौ गहि मौन कूँ ॥६॥
प्रथम हिये बिचार, ढीम सो न दीजै डार ।
ताहि तैं सुबचन, सँभारि करि बोलिये ॥
जानै न कुहेत हेत, भावे तैसी कहि देत ।
कहिये सु तब जब, मन माहिँ तौलिये ॥
सबही कूँ लागै दुख, कोऊ नहिँ पावै सुख ।
बोलिये बृथाही ता तैं, छाती नहिँ छोलिये ॥
सुंदर समुझि करि, कहिये सरस बात ।
तबहीं तौ बदन[1] कपाट गहि खोलिये ॥ ७ ॥
और तौ बचन ऐसे, बोलत हैं पसु जैसे ।
तिन के तौ बोलिबे मैं, ढंगहूँ न एक है ॥
कोऊ रात दिवस, बकतही रहत ऐसे ।
जैसी बिधि कूप मैं, बकत मानो भेक[2] है ॥
बिबिधि प्रकार करि, बोलत जगत सब ।
घट घट प्रति मुख, बचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ता तैं, बचन बिचारि लेहु ।
बचन तो वहै जा मैं, पाइये बिबेक है ॥ ८ ॥
जैसे हंस नीर कूँ, तजत है असार जानि ।
सार जानि छीर कूँ, निरालो करि पीजिये ॥
जैसे दधि मथत मथत काढ़ि लेत घृत ।
और रही मही सब छाछ छाड़ि दीजिये ॥
जैसे मधुमच्छिका, सुबास कूँ भ्रमर[3] लेत ।
तैसेही बिचार करि, भिन्न भिन्न कीजिये ॥

(१) मुँह का किवाड़ । (२) मेंढक । (३) भँवरा ।

सुंदर कहत ता तैं, बचन अनेक भाँति ।
बचन मैं बचन, बिवेक करि लीजिये ॥ ९ ॥
प्रथमहिं गुरुदेव, मुख तैं उच्चार कस्यो ।
वेई तौ बचन आय लगे, निज हिये हैं ॥
तिन को बिबेक करि, अंतःकरण माहिं ।
अतिहि अमोल नग, भिन्न भिन्न किये हैं ॥
आप को दरिद्र गयो, पर-उपकार हेत ।
नगही निगलि के उगलि नग लिये हैं ॥
सुंदर कहत यह, बाणी यूँ प्रगट भई ।
और कोई सुनि करि, रंक जीव जिये हैं ॥१०॥
बचन तैं दूर मिलै, बचन बिरोध होइ ।
बचन तैं राग बढ़ै, बचन तैं दोष जू ॥
बचन तैं ज्वाल[1] उठै, बचन सीतल होइ ।
बचन तैं मुदित[2], बचनही तैं रोष जू ॥
बचन तैं प्यारो लगै, बचन तैं दूर भगै ।
बचन तैं मुरझाय, बचन तैं पोष जू ॥
सुंदर कहत यह, बचन को भेद ऐसो ।
बचन तैं बंध होत, बचन तैं मोष जू ॥ ११ ॥
बचन तैं गुरु सिष्य, बाप पूत प्यारो होइ ।
बचन तैं बहु बिधि, होत उतपात हैं ॥
बचन तैं नारी अरु, पुरुष सनेह अति ।
बचन तैं दोऊ आप आप मैं रिसात हैं ॥

(१) आग की लवर । (२) आनंद ।

बचन तैं सभ्य आइ, राजा के हजूर होइँ ।
बचन तैं चाकर हू, छोड़ि के पलात[1] हैँ ॥
सुंदर सुबचन, सुनत अति सुख होइ ।
कुबचन सुनतहि, प्रीति घटि जात हैँ ॥ १२ ॥

एक तौ बचन सुनि, कर्महिँ मैँ बहि जाय ।
करत बहुत बिधि, स्वर्ग की उमेद है ॥
एक हैँ बचन दृढ़, ईसुर उपासना[2] के ।
तिन मैँ तौ सकलही, बासना को छेद है ॥
एक है बचन ता मैँ, एकही अखंड ब्रह्म ।
सुंदर कहत यूँ, बतावै अंत वेद है ॥
बचन तौ अनेक, प्रकार सब देखियत ।
बचन बिबेक किये, बचन मैँ भेद है ॥ १३ ॥

बचन तैँ जोग करै, बचन तैँ जज्ञ करै ।
बचन तैँ तप करि, देह कूँ दहतु है ॥
बचन तैँ बंधन, करत है अनेक बिधि ।
बचन तैँ त्याग करि, बचन रहतु है ॥
बचन तैँ उरझै रु सुरझै बचनही तैँ ।
बचन तैँ भाँति भाँति, संकट सहतु है ॥
बचन तैँ जीव भयो, बचन तैँ सीव होइ ।
सुंदर बचन भेद, वेद यूँ कहतु है ॥ १४ ॥

इति वचन विबेक को अंग संपूर्ण ॥ १४ ॥

---

(१) भागना । (२) भजन, ध्यान ।

१५—निर्गुण उपासना को अंग ।

॥ इंदव छंद

ब्रह्म कुलाल[1] रचै बहु भाजन,[2] कर्मनि के बस मोहिं न भावै ।
बिस्नुहि संकट आय सहै ग्रभ[3], काहुक रच्छक काहु सतावै ॥
संकर भूत पिसाचनि को पति, पाणि कपाल लिये बिललावै[4] ।
याही तैं सुंदर तिर्गुण त्यागसु, निर्गुण एक निरंजन ध्यावै ॥१

॥ सवैया छन्द ॥

कोटिक बात बनाय कहैं कहा, होत भये सबही मन रंजन[5] ।
सास्त्र सिम्रिति अरु वेद पुराण, बखानत हैं अति लाय के अंजन ॥
पानि मैं बूड़त पानि गहै कित, पार पहूँचत हैं मति भंजन[6] ।
सुंदर तहँ लगि अंध कि जेवरि, जौलौं न ध्याइये एक निरंजन २

॥ इंदव छन्द ॥

भंजन सो जु मनो मल भंजन, सज्जन सो जु कहै गति गूझै[7] ।
गंजन सो जु इंद्री गहे गंजन, रंजन सो जु बुझावे अबूझै ॥
भंजन सो जु भख्यो रस माहिं, विद्वज्जन[8] सो कितहूँ न अरूझै ।
ब्यंजन सो जु बढ़ै रुचि सुंदर, अंजन सो जु निरंजन सूझै ॥३
जा प्रभु तैं उतपत्ति भई यह, सो प्रभु है उर इष्ट हमारे ।
जो प्रभु है सब के सिर ऊपर, ता प्रभु कूँ सिर ही हम धारे ॥
रूप न रेख अलेख अखंडित, भिन्न रहै सब कारज सारे ।
नाम निरंजन है तिनको पुनि, सुंदर ता प्रभु की बलिहारे ॥४
जो उपजै बिनसै गुण धारत, सो यह जानहु अंजन माया ।
आव न जाय मरै नहिं जीवत, अच्युत एक निरंजन राया ॥

---

(१) कुम्हार । (२) बरतन । (३) गर्भ मैं । (४) हाथ पर सिर रख के रोवे ।
(५) मन को प्रसन्न करनेवाला । (६) तोड़ना । (७) गुप्त । (८) विद्वान ।

ज्यूँ तरु तत्त्व रहै रस एकहि, आवत जात फिरै यह छाया।
सो परब्रह्म सदा सिर ऊपर, सुंदर ता प्रभु सूँ मन लाया ॥५
जो उपज्यो कछु आहि जहाँलगि, सो सब नास निरंतर होई।
रूप धर्यो सु रहै नहिँ निहचल, तीनहुँ लोक गिनै कहँ कोई॥
राजस तामस सात्त्विक जे गुण, देखत काल ग्रसै पुनि वोई।
आपहि एक रहै जु निरंजन, सुंदर के मन मानत सोई ॥६॥
देवनि के सिर देव बिराजित, ईसुर के सिर ईसुर कहिये।
लालनि के सिर लाल निरंतर, खूबनि के सिर खूबहि लहिये॥
पाकनि के सिर पाक सिरोमणि, देखि बिचारि उहै दृढ़ गहिये।
सुंदर एक सदा सिर ऊपर, और कछू हम कूँ नहिँ चहिये ॥७
सेस महेस गणेस जहाँ लगि, विष्नु बिरंचिहु[1] के सिर स्वामी।
व्यापक ब्रह्म अखंड अनाब्रत, बाहर भीतर अंतरजामी॥
ओर न छोर अनंत कहै गुण, याही तैँ सुंदर है घन नामी।
ऐसो प्रभू जिनके सिर ऊपर, क्यूँ वरिहै तिन कूँ कहि खामी[2] ॥८

इति निर्गुण उपासना को अंग संपूर्ण ॥ १५ ॥

१६--पतिव्रता को अंग।

॥ इंदव छंद ॥

आन कि ओर निहारत ही जस, जात पतिव्रत एक ब्रती को।
होत अनादर ऐसिहि भाँति जु, पीछे फिरे नहिँ सूर सती को॥
नेकहि मैँ हरवो[3] हुइ जात, खिसै अध बिंदु जु जोग जती को।
राम हृदै ते गये जन सुंदर, एक रती बिन पाव रती को ॥१
जो हरि कूँ तजि आन उपासत, सो मतिमंद फजीहत होई।
ज्यूँ अपने भरतारहि छाड़ि, भई बिभिचारिणि कामिनी कोई॥

---

(१) विधाता। (२) कचाई, चूक। (३) पतित।

सुंदर ताहि न आदरमान, फिरै बिमुखी अपनी पत खोई ।
बूड़ि मरै किन कूपमँझार, कहा जग जीवत है सठ सोई ॥२
होइ अनन्य[1] भजै भगवंतहि, और कछू उर मैं नहिं राखै ।
देवि रु देव जहाँ लग हैं, डर के तिन सूँ कहिं दीन न भाखै ॥
जोगहु जज्ञ ब्रतादि क्रिया, तिन को तो नहीं सुपने अभिलाखै ।
सुंदर अमृत पान कियो, तब तौ कहु कौन हलाहल[2] चाखै ॥३
एक सही सब के उर अंतर, ता प्रभु कूँ कहु काहि न गावै ।
संकट माहिं सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूँ बिसरावै ॥
चार पदारथ ओर जहाँ लगि, आठहु सिद्धि नवौ निधि पावै ।
सुंदर छार परौ तिनके मुख, जो हरि कूँ तजि आन कूँ ध्यावै ॥४
पूरण काम सदा सुख धाम, निरंजन राम सिरज्जनहारो[3] ।
सेवक होइ रह्यो सब को नित, कीटहि कुंजर देत अहारो ॥
भंजन दुक्ख दरिद्र निवारण, चिंत करै पुनि साँझ सबारो ।
ऐसे प्रभू तजि आन उपासत, सुंदर है तिनको मुख कारो ॥ ५

॥ मनहर छंद ॥

पतिही सूँ प्रेम होइ, पतिही सूँ नेम होइ ।
पतिही सूँ छेम होइ, पतिही सूँ रत है ॥
पतिही है जज्ञ जोग, पतिही है रस भोग ।
पतिही सूँ मिटै सोग, पतिही को जत है ॥
पतिही है ज्ञान ध्यान, पतिही है पुन्न दान ।
पतिही है तीर्थ स्नान, पतिही को मत है ॥
पति बिनु पति नाहिं, पति बिनु गति नाहिं ।
सुंदर सकल बिधि, एक पतिब्रत है ॥ ६ ॥

(१) एक । (२) विष । (३) उत्पन्न करने वाला ।

जल को सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान।
मणि बिनु अहि[1] जैसे, जीवत न लहिये ॥
स्वाँति बिंदु को सनेही, प्रगट जगत माहिँ।
एक सीप दूसरो सु, चातकहु कहिये ॥
रवि को सनेही पुनि, कमल सरोवर मैँ।
ससि को सनेही हू, चकोर जैसे रहिये ॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभु सूँ सनेह जोर।
और कछु देखि, काहू ओर नहिँ बहिये ॥ ७ ॥

इति पतिव्रता को अंग संपूर्ण ॥ १६ ॥

१७--बिरह उराहने को अंग।

॥ मनहर छंद ॥

पीय को अँदेसो भारी, तो सूँ कहूँ सुन प्यारी।
यारी[2] तोरि गये सो तौ, अजहूँ न आये हैँ ॥
मेरे तौ जीवनप्राण, निसि दिन उहै ध्यान।
मुख सूँ न कहूँ आन, नैन उर लाये हैँ ॥
जब तैँ गये बिछोहि, कल न परत मोहिँ।
ता तैँ हूँ पूछत तोहि, किन बिरमाये[3] है ॥
सुंदर बिरहिनी को, सोच सखी बार बार।
हम कूँ बिसार अब, कौन के कहाये हैँ ॥ १ ॥
हम कूँ तौ रैन दिन, संक मन माहिँ रहै।
उनकी तौ बातनि मैँ, ठीकहु न पाइये ॥
कबहूँ सँदेसा सुनि, अधिक उछाह[4] होइ।
कबहुंक रोइ रोइ, आँसुन बहाइये ॥

(१) साँप। (२) स्नेह। (३) रिझाकर रोक लेना। (४) आनन्द।

औरन के रस बस, होइ रहे प्यारे लाल।
आवन की कहि कहि, हम कूँ सुनाइये॥
सुंदर कहत ताहि, काटिये सु कौन भाँति।
जोइ तरु आपने सु, हाथ तैं लगाइये॥ २॥
मो सूँ कहै औरसीोही, वा सूँ कहै औरसीोही।
जा कूँ कहै ताही के, प्रतीत कैसे होत है॥
काहू सूँ समास[1] करै, काहू सूँ उदास फिरै।
काहू सूँ तौ रस बस, एकमेक पोत है॥
दगाबाजी दुबिधा तो, मन की न दूर होइ।
काहू के अँधेरो घर, काहू के उद्योत[2] है॥
सुंदर कहत जा के, पीर सो करै पुकार।
जा के दुख दूर गये, ता को भई बात है॥ ३॥
हिये और जिये और, लिये और दिये और।
किये और कौनसो, अनुप पाटी पढ़े हैं॥
मुख और बैन और, नैन और तन और।
मन और काया सब, जंत्र माहिं कढ़े हैं॥
हाथ और पाँव और, सीसहू स्त्रवण और।
नख सिख रोम रोम, कलई सूँ मढ़े हैं॥
ऐसी तौ कठोरता न, सुनी नहिं देखी जग।
सुंदर कहत कोई, बज्रही के गढ़े हैं॥ ४॥

इति बिरह उराहने को अंग संपूर्ण॥ ७॥

१८—शब्द सार को अंग।

मनहर छंद

भूल्यो फिरै भ्रम तैं, कहत कछु और और।
करत न ताप दूरि, करत संताप[3] कूँ॥

---

(१) मेला। (२) उजेला। (३) कष्ट, दुख।

दक्ष[१] भयो रहै पुनि, दक्ष प्रजापति जैसे ।
देत पर दीक्षणा[२], न दीक्षा देत आप कूँ ॥
सुंदर कहत ऐसे, जा मैं न जुगति कछु ।
और जाप जपै न, जपत निज जाप कूँ ॥
बाल भयो ज्वान भयो, बय बीते बृद्ध भयो ।
बपु[३] रूप होइ के, बिसारि गयो आप कूँ ॥१॥

॥ इंदव छंद

पान उहै जु पियूष[४] पिवै नित, दान उहै जु दरिद्र कूँ भानै[५]।
कान उहै सुनिये जस केसव, मान उहै करिये सनमानै ॥
तान उहै सुर तान रिझावत, जान उहै जगदीसहि जानै ।
बान उहै मन बेधत सुंदर, ज्ञान उहै उपजै न अज्ञानै ॥२॥
सूर उहै मन को बस राखत, कूर उहै मन माँहि लजैहै ।
त्याग उहै अनुराग नहीं कहुँ, भाग उहै मन मोह तजैहै ॥
तज्ञ[६] उहै निज तत्त्वहि जानत, यज्ञ उहै जगदीस यजैहै[७] ।
रत्त[८] उहै हरि सूँ रति सुंदर, भक्त उहै भगवंत भजैहै ॥३॥
चाप[९] उहै कसिये रिपु ऊपर, दाप[१०] उहै दल कारहि मारै ।
छाप उहै हरि आप दई सिर, थाप[११] उहै थपि और न धारै॥
जाप उहै जपियेअजपा नित, व्यापउहै निज व्याप बिचारै।
बाप उहै सब को प्रभु सुंदर, पाप हरै अरु ताप निवारै ॥४॥
भौन उहै भय नाहिंन जामहि, गौन उहै फिरि होइ न गौना।
वौन[१२] उहै बमिये बिषयारस, रौन[१३] उहै प्रभु सूँ नहिं रौना[१४]॥
मौन उहै जु लिये हरि बोलत, लौन उहै सब और अलौना ।
सौन[१५] उहै गुरु संत मिलै जब, सुंदर संक रहै नहिं कौना ॥५॥

---

(१) प्रवीन । (२) पर उपदेश । (३) शरीर । (४) सुधा । (५) नाश करे ।
(६) आत्म ज्ञानी । (७) पूजना । (८) प्रेमी । (९) धनुष । (१०) अहंकार ।
(११) धारना । (१२) कै, उछाड़ । (१३) प्रेम । (१४) भूलना । (१५) संग ।

कार उहै अविकार[1] रहै नित, सार[2] उहै जु असारहि नाखै[3]।
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीति न भाखै ॥
तंत[4] उहै लगि अंत न टूटत, संत उहै अपनो सत राखै ।
नाद[5] उहै सुनि बाद[6] तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै॥६॥

स्वास उहै जु उस्वास न छाड़त, नास उहै फिरि होइ न नासा।
पास उहै सत पास लगै, जम-पास कटै प्रभु के नित पासा॥
बास उहै गृहबास तजै, बनबास सही तिहि ठौहर बासा ।
दास उहै जु उदास रहै, हरिदास सदा कहि सुंदर दासा॥७

स्रोत्र[7] उहै स्रुति[8]सार सुनै, अरु नैन उहै निज रूप निहारै।
नाक उहै हरि नाकहिं राखत, जीभ उहै जगदीस उचारै ॥
हाथ उहै करिये हरि को कृत[9], पाँव उहै प्रभु के पथ धारै ।
सीसि उहै करि स्याम समर्पण, सुंदर यूँ सब कारज सारै॥८॥

सोवत सोवत सोइ गयो सठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो ।
गोवत[10] गोवत गोइ धर्‌यो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो॥
जोवत[11] जोवत बीति गये दिन, बोवत बोवत तैं बिष बोयो।
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहिं ढोयो॥९

देखत देखत देखत मारग, बूझत बूझत बूझत आयो ।
सूझत सूझत सूझ परी सब, गावत गावत गोबिंद गायो॥
साधत साधत साध भयो पुनि, तावत तावत कंचन तायो ।
जागत जागत जागि पर्‌यो जब, सुंदर सुंदर सुंदर पायो॥१०॥

इति शब्द सार को अंग संपूर्ण ॥ १८ ॥

---

(१) बिकार रहित । (२) सत्य । (३) फेंक दे । (४) तत्व —यहाँ ध्यान से अभिप्राय है। (५) शब्द । (६) झगड़ा । (७) कान । (८) वेदांत । (९) सेवा। (१०) छिपाना। (११) देखत।

१९--भक्ति ज्ञान मिश्रित को अंग।

॥ इंदव छंद ॥

बैठत रामहि ऊठत रामहि, बोलत रामहि राम रह्यो है।
जीमत[1] रामहि पीवत रामहि, धामहिं रामहि राम गह्यो है॥
जागत रामहि सोवत रामहि, जोवत रामहि राम लह्यो है।
देतहु रामहि लेतहु रामहि, सुंदर रामहि राम रह्यो है॥१॥

स्रोत्रहु रामहि नेत्रहु रामहि, वक्त्रहु रामहि रामहि गाजै।
सीसहु रामहि हाथहु रामहि, पाँवहु रामहि रामहि छाजै॥
पेटहु रामहि पीठिहु रामहि, रोमहु रामहि रामहि बाजै।
अंतर राम निरंतर रामहि, सुंदर रामहि राम बिराजै॥२॥

भूमिहु रामहि आपहु रामहि, तेजहु रामहि वायुहु रामे।
ब्योमहु[2] रामहि चंदहु रामहि, सूरहु[3] रामहि सीतहु घामे॥
आदिहु रामहि अंतहु रामहि, मध्यहु रामहि पुरुष रु बामे।
आजहु रामहि काल्हहु रामहि, सुंदर रामहि रामहि थामे॥३

देखहु राम अदेखहु रामहि, लेखहु राम अलेखहु रामे।
एकहु राम अनेकहु रामहि, सेषहु राम असेषहु ता मैं॥
मौनहु राम अमौनहु रामहि, गौनहु रामहि ठाम कुठामे।
बाहिर रामहि भीतर रामहि, सुंदर रामहि है जग जा मैं॥४

दूरहु राम नजीकहु रामहि, देसहु राम प्रदेसहु रामे।
पूरब रामहि पच्छिम रामहि, दक्खिन रामहि उत्तर धामे॥
आगेहु रामहि पीछेहू रामहि, ब्यापक रामहि हैं वन ग्रामे।
सुंदर राम दसो दिसि पूरण, स्वर्गहु राम पतालहु ता मैं॥५॥

आपहु राम उपावत रामहि, भंजन राम सँवारन वा मैं।
दृष्टहु राम अदृष्टहु रामहि, इष्टहु राम करै सब कामे॥

---

(१) खाते हुए। (२) आकाश। (३) सूर्य्य।

पूर्णहु राम अपूर्णहु रामहि, रक्त न पीत न स्वेत न स्यामे।
सून्यहु राम असून्यहु रामहि, सुंदर रामहि नाम अनामे ॥६॥

॥ इति भक्तिज्ञान मिश्रित को अंग संपूर्ण ॥ १९ ॥

२०--विपर्जय को अंग ।

॥ सवैया ॥

स्रवणहु देखि सुनै पुनि नयनहु, जिह्वा सुँघै नासिका बोले ।
गुदा खाय इंद्रिय जल पीवै, बिनही हाथ सुमेरहि तोले ॥
ऊँचे पाँव मूड़ नीचे कूँ, तीन लोक मैँ बिचरत डोले ।
सुंदरदास कहै सुन ज्ञानी, भली भाँति या अर्थहि खोले ॥१

अंधा तीन लोक कूँ देखै, बहिरा सुनै बहुत बिधि नाद ।
नकटा बास कमल की लेवै, गूँगा करै बहुत संबाद ॥
टूँठा पकरि उठावे पर्बत, पंगू करै निरत अह्लाद[1] ।
जो कोउ या को अर्थ बिचारै, सुंदर सोई पावै स्वाद ॥२

कुंजर[2] कूँ कीरी[3] गिलि बैठी, सिंहहि खाय अघानो स्याल[4] ।
मछरी अग्नि माहिँ सुख पायो, जल मैँ बहुत हुती बेहाल॥
पंगु चढ़्यो पर्बत के ऊपर, मृतकहि देखि डरानो काल ।
जा को अनुभव होय सो जानै, सुंदर ऐसा उलटा ख्याल ॥३

बूँदहि माहिँ समुद्र समानो, राई माहिँ समानो मेर ।
पानी माहिँ तुंबिका बूड़ी, पाहन तरत न लागी बेर ॥
तीन लोक मैँ भया तमासा, सूरज कियो सकल अंधेर ।
मूरख होय सु अर्थहि पावै, सुंदर कहै सब्द मैँ फेर ॥४॥

(१) आनंद । (२) मन रूपी हाथी । (३) चींटी रूपी सुरत । (४) स्यार रूपी सुरत ।

मछरी बगला कूँ गहि खायो, मूसा खायो कारो साँप।
सूवे पकरि बिलाई खाई, ता के मुवे गयो संताप॥
बेटी अपनी मैया खाई, बेटे अपने खायो बाप।
सुंदर कहै सुनौ हो संतो, तिन कूँ कोउ न लाग्यो पाप॥५॥

देव[1] माहिँ ते देवल[2] प्रगट्यो, देवल माहीँ प्रगट्यो देव[3]।
सिष्य गुरुहि उपदेस न लाग्यो, राजा करै रंक की सेव॥
बंध्या पुत्र पंगु इक जायो, ता कूँ घर खोवन की टेव।
सुंदर कहत सु पंडित ज्ञाता, जो कोइ या को जानै भेव॥६॥

कमल माहिँ तैं पानी उपज्यो, पानी माहिँ तैं निपज्यो सूर।
सूर माहिँ सीतलता उपजी, सीतलता मैं सुख भरपूर॥
ता सुख को छय होय न कबहूँ, सदा एकरस निकट न दूर।
सुंदर कहत सत्य यह यूँही, या मैं रती न जानहु कूर[4]॥७॥

हंस चढ़्यो ब्रह्मा के ऊपर, गरुड़ चढ़्यो पुनि हरि की पीठ।
बैल चढ़्यो है सिव के ऊपर, सो हम दीठो अपनी दीठ॥
देव चढ़्यो पाती के ऊपर, जर्ख[5] चढ़्यो दायनि पर नीठ[6]।
सुंदर एक अचंभा हूवा, पानी माहीँ जरै अँगीठ॥ ८॥

कपरा धोबी कूँ गहि धोवै, माटी बपुरी घड़ै कुम्हार।
सुई बिचारी दरजिहि सींवै, सोना तावै पकरि सुनार॥
लकरी बढ़ई कूँ गहि छीलै, खाल सु बैठी धमै लुहार।
सुंदरदास कहै सो ज्ञानी, जो कोइ या को करै बिचार॥९॥

जा घर माहिँ बहुत सुख पायो, ता घर माहिँ बसै अब कैान।
लागी सबै मिठाई खारी, मीठो लग्यो एक वह लौन॥

---

(१) आत्मा। (२) शरीर। (३) ज्ञान दशा को प्राप्त हुई आत्मा। (४) मिथ्या। (५) राक्षस। (६) अच्छी तरह।

पर्व्वत उड़ै रुई थिर बैठी, ऐसो कोइक बाज्यो पौन।
सुंदर कहै न मानै कोई, ता तैं पकरी रहिये मौन ॥१०॥
रजनी माहिं दिवस हम देख्यो, दिवस माहिं देखी हम राति।
तेल भर्यो संपूरण ता मैं, दीपक जरै जरै नहिं बाति[1] ॥
पुरुष एक पानी मैं प्रगट्यो, ता निगुरा की कैसी जाति।
सुंदर सोई लहै अर्थ कूँ, जो नित करै पराई तात[2] ॥११॥
उनयो[3] मेघ बढ़्यो चहुँ दिसि मैं, बर्षन लग्यो अखंडित धार।
बूड़्यो मेरु नदी सब सूखी, झर लाग्यो निसिदिन इक तार॥
काँसा पर्यो बीजली ऊपर, कीन्हो सब कुटुम्ब संहार।
सुंदर अर्थ अनूपम या को, पंडित होय सु करै विचार ॥१२॥
बाड़ी माहीं माली निपज्यो, हाली[4] माहीं निपज्यो खेत।
हंसहि उलटि स्याम रँग लाग्यो, भ्रमर उलटि करि हूवो स्वेत॥
ससियर[5] उलटि राहु कूँ ग्रास्यो, सूर उलटि करि ग्रास्यो केत।
सुंदर सगुरा कूँ तजि भाग्यो, निगुरा सेती बाँध्यो हेत॥१३॥
अग्नि मथन करि लकरी काढ़ी, सो वह लकरी प्राण अधार।
पानी मथि करि घीउ निकार्यो, सो घृत खायो बारंबार॥
दूध दही की इच्छा भागी, जा कूँ मथत सकल संसार।
सुंदर अब तौ भये सुखारे, चिंता रही न एक लगार ॥१४॥
पात्र[6] माहिं झोली गहि राखै, जोगी भिच्छा माँगन जाइ।
जागै जगत सोवही गोरख, ऐसा सब्द सुनावै आइ॥
भिच्छा फिरै बहुत गुरु ता कूँ, सो वहि भिच्छा चेलै खाइ।
सुंदर जोगी जुगजुग जीवै, ता अवधूत[7] कि दूर बलाइ॥१५

(१) बत्ती। (२) चिन्ता। (३) लटक आया। (४) हल। (५) चन्द्रमा। (६) बर्तन। (७) योगी।

परधन हरै करै परनिन्दा, परतिय कूँ राखै घर माहिँ ।
माँस खाय मदिरा पुनि पीवै, ताहि मुक्ति को संसय नाहिँ॥
अक्रम गहै करम सब त्यागै, ता की संगत पाप नसाहिँ ।
ऐसो करै सु संत कहावै, सुंदर और उपजि मरि जाहिँ १६॥
निर्दय होइ तरै पसु-घातिक,[1] दयावंत बूड़ै भव माहिँ ।
लोभी लगै सबन कूँ प्यारो, निर्लोभी कूँ ठौहर नाहिँ ॥
मिथ्याबादी मिलै ब्रह्म कूँ, सत्य कहैँ ते जमपुरि जाहिँ ।
सुंदर धूप माहिँ सीतलता, जरत रहै सो बैठै छाहिँ ॥१७॥
बढ़ई चरखो भलो सँवार्‌यो, फिरने लाग्यो नीकी भाँत ।
बहू सासु कूँ कहि समुझावै, तू मेरे ढिंग बैठी कात ॥
ता को तार न टूटै कबहूँ, प्यूनी घटै नहीँ दिन रात ।
सुंदर बिधि सूँ बनै जुलाहा, खासा निपजै ऊँची जात ॥१८॥
माइ बाप तजि धी उमड़ानी, हरषत चली खसम के पास ।
बहू बिचारी बड़ि बख्तावर[2], जा के कहे चलति है सास ॥
भाई खरो भलो हितकारी, सब कुटुम्ब को कीन्हो नास ।
ऐसी बिधि घर बस्यो हमारो, कहि समुझावै सुंदरदास ॥१९
घर घर फिरै कुँवारी कन्या, जने जने सूँ करती संग ।
वेस्या सो तौ भइ पतिबरता, एक पुरुष के लागी अंग ॥
कलियुग माहीँ सतयुग थाप्यो, पापी उदय धर्म को भंग[3] ।
सुंदर कहत अर्थ सो पावै, जो नीके करि भजै अनंग[4] ॥२०॥
बिप्र रसोई करने लाग्यो, चौका भीतर बैठ्यो आइ ।
लकरी माहीँ चूल्हा दीयो, रोटी ऊपर तवा चढ़ाइ ॥
खिचरी माहीँ हँडिया राँधी, सालन आक[5] धतूरा खाइ ।
सुंदर जीमत अति सुख पायो, अबके भोजन कियो अघाइ॥२१

(१) जीव-हिंसक । (२) भाग्यमान । (३) नाश । (४) कामदेव । (५) मदार ।

बैल उलटि नायक[१] कूँ लाद्यो, बस्तु माहिँ भरि गून अपार।
भली भाँति को सौदा कीयो, आय दिसांतर या संसार॥
नाइकिनी पुनि हर्षत डोलै, मोहिँ मिल्यो नीको भरतार।
पूँजी जाइ साह कूँ सौंपी, सुंदर सिर तैं डार्यो भार॥२३॥

बनियाँ एक बनज कूँ आयो, परे तावरा भारी भैंट।
भली वस्तु कछु लीन्ही दीन्ही, खैंचि गठरिया बाँधी ऐंठ॥
सौदा कियो चल्यो पुनि घर कूँ, लेखा कियो वारि[२] तर बैठ।
सुंदर साह खुसी अति हूवो, बैल गयो पूँजी मैं पैठ॥

पहराइत[३] घर मुसो[४] साह को, रच्छा करने लागो चोर।
कोटवाल काठौं करि बाँध्यो, छूटै नहीं साँझ अरु भोर॥
राजा ग्राम छोड़ि कै भाग्यो, हूवो सकल जगत मैं सोर।
परजा सुखी भई नगरी मैं, सुंदर कोई जुलुम न जोर॥२४

राजा फिरै बिपति को मार्यो, घर घर टुकड़ा माँगै भीख।
पाँव पियादो निसि दिन डोलै, घोड़ा चालि सकै नहिं वीख[५]॥
आक अरंड[६] कि लकरी चूसै, छाड़ै बहुत रस भरे ईख[७]।
सुंदर कोउ जगत मैं बिरलो, या मूरख कूँ लावै सीख॥२५॥

पानी जरै पुकारै निसि दिन, ता कूँ अग्नि बुझावै आइ।
हूँ सीतल तू तपत भया क्यूँ, बारंबार कहै समुझाइ॥
मेरी लपट तोहिँ जो लागै, तौ तू भी सीतल ह्वै जाइ।
कबहूँ जरनि फेरि नहिँ उपजै, सुंदर सुख मैं रहै समाइ॥२६॥

खसम पर्यो जोरू के पीछे, कह्यो न मानै भुंडी[८] राँड।
जित तित फिरै भटकती यूँहीं, तैं तो कियो जगत मैं भाँड[९]॥

(१) बनिजारा। (२) पानी। (३) पहरा देने वाला। (४) मूस या चुरा लिया। (५) रास्ता। (६) रेंड़। (७) ऊख, गन्ना। (८) बदमाश औरत। (९) हँसी, उपहास।

तौ हू भूख न भागी तेरी, तू गिल बैठी सारी माँड ।
सुंदर कहै सीख सुन मेरी, अब तू घरघर फिरबो छाँड ॥२७॥
पन्थी माहिं पंथ चलि आयो, सो वह पंथ लख्यो नहिं जाइ।
वाही पंथ चल्यो उठि पंथी, निर्भय देस पहूँच्यो आइ ॥
तहाँ दुकाल परै नहिं कबहूँ, सदा सुभिच्छ रह्यो ठहराइ।
सुंदर दुखी न कोऊ दीसै, अछय सुक्ख मैं रहे समाइ ॥२८
एक अहेरी[1] बन मैं आयो, खेलन लाग्यो भली सिकार ।
कर मैं धनुष कमर मैं तरकस, सावज[2] घेरे बारंबार ॥
मार्‍यो सिंह ब्याघ्र पुनि मार्‍यो, मारी बहुत मृगन की डार[3]।
ऐसे सकल मारि घर लायो, सुंदर राजहिं कियो जुहार ।२९
सुक के बचन अमृतमय ऐसे, कोकिल धारि रहै मन माहिं ।
सारो सुनै भागवत कबहूँ, सारस तो उपजावै नाहिं ॥
हंस चुगै मुक्ताफल[4] अर्थहि, सुंदर मानसरोवर माहिं ।
काक कवीसुर नीके जेते, सो सब दौरि करंकहि जाहिं॥३०
नष्ट होय द्विज भ्रष्ट क्रिया करि, कष्ट किये नहिं पावै ठौर।
महिमा सकल गई तिनि केरी, रहत पगन तर सब सिरमौर॥
जित तित फिरै नहीं कछु आदर, तिनकूँ कोउ न घालै कौर।
सुंदरदास कही समुझावै, ऐसो कोउ करौ मति और ॥३१
सास्त्र रु वेद पुराण पढ़ै किन, पुनि व्याकरण पढ़ै जे कोइ ।
संध्या करै गहै षटकर्म[5] हि, गुण अरु काल विचारै सोइ॥
सारा काम तबै बनि आवै, मन मैं सब तजि राखै दोइ।
संुदरदास कहै सुन पंडित, राम नाम बिनु मुक्ति न होइ॥३२

(१) शिकारी । (२) शिकार । (३) झुंड । (४) मोती । (५) पढ़ाना, पढ़ना, दान देना, दान लेना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना ।

॥ श्लोक ॥

श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ कोटिभिः ।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः ॥१॥

॥ दोहा ॥

पीवत रस विपरीत यह, ताहि होत निज ज्ञान ।
बहुरि जन्म होवै नहीं, रहत सु पूर्ण प्रमान ॥१॥

इति विपर्यय को अंग संपूर्ण ॥ २० ॥

२१—स्वरूपविस्मरण को अंग ।

॥ इंदव छंद ॥

जा घट की उनहार है जैसिहि, ता घट चेतन तैसोहि दीसै ।
हाथि कि देह मैं हाथि सौं मानत, चींटि की देह मैं चींटि करीसै
सिंह कि देह मैं सिंह सौं मानत, कीस[1] कि देह मैं मानत कीसै ।
जैसि उपाधि भई जहँ सुंदर, तैसोहि होइ रह्यो नखसीसै१॥
जैसेहि पावक काठ के जोग तैं, काठसौं होइ रह्यो इकठौरा।
दीरघ[2] काठ मैं दीरघ लागत, चौरस काठ मैं लागत चौरा ॥
आपनो रूप प्रकास करै जब, जारि करै तब और को औरा ।
तैसेहि सुंदर चेतन आपहि, आप कूँ जानत नाहिन बौरा ॥२

॥ मनहर छंद—प्रश्न ॥

अजर[3] अमर अविगत, अविनासी अज[4] ।
कहत सकल जन, स्रुति अवगाहे तैं ॥
निर्गुण निर्मल अति, सुद्ध निरबंध नित ।
ऐसेहि कहत और, ग्रंथन के थाहे तैं ॥
व्यापक अखंड, एक रस परिपूरण है ।
सुंदर सकल रमि, रह्यो ब्रह्म ताहे तैं ॥

---

(१) बंदर । (२) लंबा । (३) जो कभी बूढ़ा न हो । (४) अजन्मा ।

सहज सदा उद्योत[1], याही तैं अचंभा होत।
आपही कूँ आप भूलि गयो सो तौ काहे तैं ॥३॥

॥ उत्तर ॥

जैसे मीन माँस कूँ, निगलि जात लोभ लगि।
लोह को कंटक नहिं, जानत उमाहे तैं ॥
जैसे कपि गागर मैं, मूठ बाँधि राखै सठ।
छाड़ि नहिं देत सो तौ, स्वादही के चाहे तैं ॥
जैसे सुक नारियर, चूँच मारि लटकत।
सुंदर कहत दुक्ख, देत याहि लाहे तैं ॥
देह को सँजोग पाइ, इंद्रिन के बस पर्‍यो।
आपही कूँ आप, भूलि गयो सुख चाहे तैं ॥४॥

॥ इंदव छन्द ॥

ज्यूँ कोइ मद्य पिये अति छाकत[2],
नाहिं कछू सुधि है भ्रम ऐसो।
ज्यूँ कोइ खाइ रहै ठगमूरिहि,
जानै नहीं कछु कारण तैसो ॥
ज्यूँ कोइ बालक संक उपावत[3],
कंपि उठै अरु आनत भय सो।
तैसेहि सुंदर आप कूँ भूलि सु,
देखहु चेतन मानत कैसो ॥ ५ ॥
ज्यूँ कोइ कूप मैं झाँकि अलापत[4],
वैसिहि भाँति सु कूप अलापै ॥

---

(१) प्रकाशमान। (२) मतवाला हो जाता है। (३) डर पैदा करता है।
(४) शोर से गाता है।

ज्यूँ जल हालत है लगि पौन,
कहै भ्रम तें प्रतिबिंबहि काँपै ॥
देह के प्राण के औ मन के कृत,
मानत है सब मोहिं कूँ व्यापै ।
सुंदर पेच पर्‌यो अतिसै करि,
भूलि गयो भ्रम तें ब्रह्म आपै ॥ ६ ॥
ज्यूँ द्विज कोउक छाड़ि महातम,
सूद्र भयो करि आप कूँ मान्यो ।
ज्यूँ कोउ भूपति[१] सोवत सेज सु,
रंक भयो सुपने महिं जान्यो ॥
ज्यूँ कोउ रूप कि रासि[२] अत्यंत,
कुरूप कहे भ्रम भैचक[३] आन्यौ ।
तैसेहि सुंदर देह सौं होय के,
या ब्रह्म आपहि आप भुलान्यो ॥ ७ ॥
एकहि व्यापक बस्तु निरंतर,
बिस्व नहीं यह ब्रह्म बिलासै ।
ज्यूँ नट मंत्रन सूँ दृग बाँधत,
है कछु औरहि औरहि भासै ॥
ज्यूँ रजनी महँ बूझ परै नहिं,
ज्यौं लगि सूरज नाहिं प्रकासै ।
त्यूँ यह आपहि आप न जानत,
सुंदर ह्वै रह्यो सुंदरदासै ॥ ८ ॥

(१) राजा । (२) ढेर । (३) भौंचक्का होना ।

॥ मनहर छन्द ॥

इंद्रिन कूँ प्रेरी पुनि, इंद्रिन के पीछे पर्‌यो।
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है॥
जोइ जोइ देह कूँ, संकट आइ परै कछु।
सोइ सोइ मानै आप, या तैं दुख सह्यो है॥
भ्रमत भ्रमत कहूँ, भ्रम को न आवै अंत।
चिरकाल[1] बीत्यो पै, स्वरूप कूँ न लह्यो है॥
सुंदर कहत देखौ, भ्रम की प्रबलताई।
भूतन मैं भूत मिलि, भूत होइ रह्यौ है॥ ९॥
जैसे सुक नलिका न, छाड़ि देत पगन तैं।
जानै काहू और मोहिं, बाँधि लटकायो है॥
जैसे कपि गुंजन[2] को, ढेर करि मानै आग।
आगे धरि तापै कछु, सीत न गमायो[3] है॥
जैसे कोऊ कारज कूँ, जात हुतो पूरब कूँ।
भ्रम तैं उलटि फिरि, पच्छिम कूँ आयो है॥
तैसेहि सुंदर सब, आपही कूँ भ्रम भयो।
आपही कूँ भूलि करि, आपही बँधायो है॥१०॥
जैसे कोऊ कामिनी के, हिये पर सूते बाल[4]।
सुपने मैं कहै, मेरो पुत्र कहूँ गयो है॥
जैसे काहू पुरुष के, कंठ हुती मणि सोही।
ढूँढ़त फिरत कछु, ऐसो भ्रम भयो है॥
जैसे कोऊ वायु करि, बावरो बकत डोलै।
औरही की और कहै, सुधि भूलि गयो है॥

---

(१) बहुत दिन। (२) घुँगची। (३) खोया। (४) लड़का।

तैसेहि सुंदर, निज रूप कूँ बिसारि देत ।
ऐसो भ्रम आपही कूँ, आप करि लयो है ॥११॥
दिन दिन छिन छिन, होइ जात भिन्न भिन्न ।
देह के सँजोग पराधीन[1], सो रहतु है ॥
सीत लगै घाम लगै, भूख लगै प्यास लगै ।
सोक मोह मान, अति खेद कूँ लहतु है ॥
अंध भयो पंगु भयो, मूकहू[2] बधिर[3] भयो ।
ऐसे मानि मानि भ्रम, नदी मैं बहतु है ॥
सुंदर अधिक मोहिं, याहि तैं अचंभा आहि ।
भूलि कै स्वरूप कूँ, अनाथ सो कहतु है ॥१२॥
जैसे कोइ कहै मैं तो, सुपने मैं ऊँट भयो ।
जागि करि देखै वही, मानुष स्वरूप है ॥
जैसे कोई राजा पुनि, सोवत भिखारी होइ ।
आँख उघरै तो महा, भूपन को भूप है ॥
जैसे कोउ भ्रमहू तैं कहै, मेरो सिर कहाँ ।
भ्रम के गये तैं जानै, सिर तदरूप है ॥
तैसेही सुंदर यह, भ्रम करि भूल्यो आप ।
भ्रम के गये तैं यह, आतमा अनूप है ॥ १३ ॥
जैसे काहू पोसती[4] की, पाग परी भूमि पर ।
हाथ लैके कहै एक, पाग मैं तो पाई है ॥
जैसे सेखसली[5], मनोरथन को कियो घर ।
कहै मेरो घर गयो, गागरि गिराई है ॥
जैसे काहू भूत लग्यो, बकत है आकबाक ।
सुद्धि सब दूर भई, औरे मति आई है ॥

---

(१) परबश । (२) गूँगा । (३) बहरा । (४) अफ़ीमची । (५) शेख़ चिल्ली ।

तैसे ही सुंदर यह, भ्रम करि भूलो आप ।
भ्रम के गयेँ ते यह, आतमा सदाई है ॥ १४ ॥

आपही चेतन यह, इंद्रिन चेतन करि ।
आपही मगन होइ, आनँद बढ़ायो है ॥
जैसे नर सीतकाल, सोवत निहाली[1] ओढ़ ।
आपही तपत होइ, आप सुख पायो है ॥
जैसे बाल लकरी कूँ, घोड़ा करि डाक चढ़ै ।
आप असवार होइ, आपही कुदायो है ॥
तैसेही सुंदर यह, जड़ को सँजोग पाय ।
आप सुखमानि मानि, आपही भुलायो है ॥१५॥

कहूँ भूल्यो कामरत, कहूँ भूल्यो साधी जत ।
कहूँ भूल्यो गृह मध्य, कहूँ बनबासी है ॥
कहूँ भूल्यो नीच मानि, कहूँ भूल्यो ऊँच मानि ।
कहूँ भूल्यो मोह बाँधि, कहूँ तो उदासी[2] है ॥
कहूँ भूल्यो मैान धरि, कहूँ बकवाद करि ।
कहूँ भूल्यो मक्के जाइ, कहूँ भूल्यो कासी है ॥
सुंदर कहत अहंकारहू तैँ भूल्यो आप ।
एक आवै रोन अरु, दूजे आवै हाँसी है ॥१६॥

मैँ बहुत दुख पायो, मैँ बहुत सुख पायो ।
मैँ अनंत पुन्य किये, मेरे अति पाप है ॥
मैँ कुलीन विद्यावंत, पंडित प्रवीन महा ।
मैँ तो मूढ़ अकुलीन[3], मेरो नीच बाप है ॥
मैँ हूँ राजा मेरी आन, फिरै चहूँ चक्र माहिँ ।
मैँ सो रंक द्रव्यहीन, मोहिँ तो संताप है ॥

(१) लिहाफ़ । (२) संन्यासी । (३) नीच कुल ।

सुंदर कहत अहंकारही तैँ जीव भयो ।
अहंकार गये यह, एक ब्रह्म आप है ॥ १७ ॥
देहही सु पुष्ट लगै, देहही दूबरी लगै ।
देहही कूँ सीत लगै, देहही कूँ तावरो ॥
देहही कूँ तीर लगै, देहही कूँ तोप लगै ।
देह कूँ कृपाण[1] लगै, देहही कूँ घावरो ॥
देहही सुरूप लगै, देहही कुरूप लगै ।
देहही जोबन लगै, देह बृद्ध डावरो ॥
देहही सौँ बाँधि हेत, आप बिषे मानि लेत ।
सुंदर कहत ऐसो, बुद्धिहीन बावरो ॥ १८ ॥

॥ इंदव छंद ॥

आपहि चेतन ब्रह्म अखंडित, सो भ्रम तैँ कछु अन्य परेखै।
ढूँढत ताहि फिरै जितही तित, साधत जोग बनावत भेषै ॥
और हु कष्ट करै अतिसय[2] करि, प्रत्यक आतम तत्त्व न पेखै।
सुंदर भूलि गयो निज रूपहि, है कर कंकण दर्पण देखै ॥१९
सूत्र[3] गले महिँ मेलि भयो द्विज, ब्राह्मण होइ के ब्रह्म न जान्यौ
छत्रिय होइ के छत्र धस्यो सिर, हय गज पैदल सूँ मन मान्यो
वैस्य भयो बपु[4] की वय[5] देखत, झूठ प्रपँच बनीजहि ठान्यो।
सूद्र भयो मिलि सूद्र सरीरहि, सुंदर आप नहीँ पहिचान्यो२०
ज्यूँ रवि कूँ रवि ढूँढत है, कहुँ तप्त मिलै तन सीत गमाऊँ ।
ज्यूँ ससि कूँ ससि चाहतहै, पुनि सीतल ह्वै करि तप्त बुझाऊँ॥
ज्यूँ सनिपात भये नर टेरत, है घर मैँ अपने घर जाऊँ।
त्यूँ यह सुंदर भूलि स्वरूपहि, ब्रह्म कहै कब ब्रह्महि पाऊँ२१

---

(१) तलवार। (२) बहुत। (३) जनेऊ। (४) शरीर। (५) अवस्था।

आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण काट[1] लग्यो अति थूला।
ज्यूँ दृग देखत तेँ रहि जात, भयो जबहीँ पुतरी परि फूला[2]॥
छाय अज्ञान रह्यो अभि अंतर, जानि सकै नहिँ आतम मूला।
सुंदर यूँ उपजे मन के मल, ज्ञान विना निज रूपहि भूला ॥२२
दीन हुवो बिललात फिरै नित, इंद्रिन के बस छिल्लक छोलै।
सिंह नहीँ अपनो बल जानत, जंबुक[3] ज्यूँ जितही तित डोलै॥
चेतनता बिसराइ निरंतर, लै जड़ता भ्रम गाँठि न खोलै।
सुंदर भूलि गयो निज रूपहि, देह-सरूप भयो मुख बोलै ॥२३
मैँ सुखिया सुख सेज सुखासन, हय गज भूमि महा रजधानी।
हौँ दुखिया दिन रैन मरूँ दुख, मोहिँ बिपत्ति परी नहिँ छानी॥
हौँ अति उत्तम जाति बड़ो कुल, हौँ अतिनीच क्रिया कुल हानी
सुंदर चेतनता न सँभारत, देह-सरूप भयो अभिमानी ॥२४
गर्भ बिषे उतपत्ति भई जब, जन्म लियो सिसु सुद्धि न जानी।
बाल कुमार किसोर युवादिक, बृद्ध भयो अति बुद्धि नसानी॥
जैसिहि भाँति भई बपु[4] की गति, तैसोहि होइ रह्यो यह प्रानी।
सुंदर चेतनता न सँभारत, देह-सरूप भयो अभिमानी ॥२५॥
ज्यूँ कोइ त्याग करै अपनो घर, बाहिर जाइ के भेष बनावै।
मूँड मुँडाइ रु कान फराइ, बिभूति लगाइ जटाहु बढ़ावै॥
जैसोहि स्वाँग करै बपु को पुनि, तैसोहि मानत त्यूँ हुइ जावै
त्यूँ यह सुंदर आप न जानत, भूलि स्वरूपहि और कहावै २६

इति स्वरूप विस्मरण को अंग संपूर्ण ॥ २१ ॥

---

(१) काई, मोरचा। (२) फुल्ली। (३) सियार। (४) शरीर।

२२—बिचार को अंग।

॥ मनहर छंद ॥

प्रथम स्रवण करि, चित्तहि एकाग्र[1] धरि।
गुरु संत आगम कहै, सु उर धारिये॥
दुतिय मनन[2], बार बारहि बिचारि देखै।
जोइ कछु सुनै ताहि, फेरिके संभारिये॥
तृतिय प्रकार निदिध्यासही[3] जु नीके करि।
निःसंग बिचार तैं, अपनपौ टारिये॥
साक्षातकार याही साधन करत होइ।
सुंदर कहत द्वैत बुद्धि कूँ निवारिये॥ १॥

देखै तौ बिचार करि, सुनै तौ बिचार करि।
बोलै तौ बिचार करि, करै तौ बिचार है॥
खाय तौ बिचार करि, पोवै तौ बिचार करि।
सोवै तौ बिचार करि, जागै तौ न टार है॥
बैठे तौ बिचार करि, उठै तौ बिचार करि।
चलै तौ बिचार करि, सोई मत सार है॥
देइ तौ बिचार करि, लेइ तौ बिचार करि।
सुंदर बिचार करि, याही निरधार है॥ २॥

एकही बिचार करि, सुख दुख सम जाने।
एकही बिचार करि, मल सब धोइ है॥
एकही बिचार करि, संसार-समुद्र तरै।
एकही बिचार करि, पारंगत होइ है॥
एकही बिचार करि, बुद्धि नाना भाव तजै।
एकही बिचार करि, दूसरो न कोइ है॥

---

(१) सावधान। (२) चिन्तवन। (३) निध्यासन, ध्यान।

एकही बिचार करि, सुंदर संदेह मिटै ।
एकही बिचार करि, एक ब्रह्म जोइ[1] है ॥ ३ ॥

॥ इंदव छंद ॥

रूप को नास भयो कछु देखिय ।
रूप अरूपहि माहिँ समावै ॥
रूप के मध्य अरूप अखंडित ।
सो तौ कहूँ कछु जाय न आवै ॥
बीच अज्ञान भयो नव तत्त्व को ।
वेद पुराण सबै कोउ गावै ॥
सोइ विचार करै जब सुंदर ।
सोधत[2] ताहि कहूँ नहिँ पावै ॥ ४ ॥
भूमि सु तौ नहिँ गंध कुँ छाड़त ।
नीर सु तौ रस तैँ नहिँ न्यारो ॥
तेज सु तौ मिलि रूप रह्यो पुनि ।
वायु सपर्स सदा सु पियारो ॥
व्योम[3] रु सब्द जुदे नहिँ होवत ।
ऐसहि अंतःकरण विचारो ॥
ये नव तत्त्व मिले इन तत्त्वनि
सुंदर भिन्न सरूप हमारो ॥ ५ ।
छीण रु पुष्ट सरीर को धर्म जु ॥
सीतहु उष्ण[4] जरा[5] मृत ठानै ॥
भूख तृषा गुण प्राण कूँ व्यापत ।
सोक रु मोह उभै[6] मन आनै ॥

(१) देखना । (२) ढूँढ़ता है । (३) आकाश । (४) गरमी । (५) बुढ़ापा । (६) दोनों ।

बुद्धि बिचार करै निसि बासर ।
चित्त चितै सु अहं अभिमानै ॥
सर्व को प्रेरक सर्व को साक्षि[1] जु ।
सुंदर आप कूँ न्यारोहि जानै ॥ ६ ॥
एकहि कूप तैं नीरहि सींचत ।
ईख अफीमहि अंब अनारा ॥
होत उहै जल स्वाद अनेकनि ।
मिष्ट कटूक[2] खटा अरु खारा ॥
त्यूँही उपाधि सँजोग तैं आतम ।
दीसत आहि मिल्यो सबिकारा ॥
काढ़ि लिये सु बिबेक बिचार सुँ ।
सुंदर सुद्ध सरूप है न्यारा ॥ ७ ॥
रूप परा को न जानि परै कछु ।
ऊठत है जिहि मूल तैं छानी ॥
नाभि बिषे मिलि सप्त किये स्वर ।
पुर्ष सँजोग पंस्यति बखानी ॥
नाद सँजोग हृदय पुनि कंठ जु ।
मध्यम याहि बिचार तैं जानी ॥
अक्षर भेद मिलै मुख द्वार सु ।
बोलत सुंदर बैखरि बानी ॥ ८ ॥
ज्यूँ कोइ रोग भयो नर के घट ।
बैद कहै यह बायु बिकारा ॥
कोउ कहै ग्रह आइ लगे ता तैं ।
पुन्न किये कछु होइ उबारा ॥

---

(१) साखी । (२) कडुवा ।

कोइ कहै यह चूक परी कछु ।
देवनि दोष[1] कियो निरधारा ॥
तैसेहि सुंदर तंत्रनि के मत ।
भिन्नहि भिन्न कहै जु बिचारा ॥ ९ ॥
जे बिषयातम पूरि रहै ।
तिन कूँ रजनी महँ बादर छायो ॥
कोउ मुमुक्षु किये गुरुदेव तो ।
निर्भय जुक्त जु सब्द सुनायो ॥
बादर दूर भये उनके पुनि ।
तारन सूँ रजु[2] सर्प दिखायो ॥
सुंदर सूर प्रकासतही भ्रम ।
दूर भयो रजु को रजु पायो ॥ १० ॥
कर्म सुभासुभ की रजनी[3] पुनि ।
अर्ध तमोमय[4] अर्ध उजारी ॥
भक्ति सु तौ यह है अरुणोदय[5] ।
अंत निसा दिन संधि बिचारी ॥
ज्ञान सु भानु[6] उदै निसि बासर ।
वेद पुराण कहै जु पुकारी ॥
सुंदर तीन प्रभाव बखानत ।
यूँ निहचै समुझै बिधि सारी ॥ ११ ॥

॥ मनहर छंद ॥

देहही सोँ आप मानि, देहही सोँ होइ रह्यो ।
जड़ता अज्ञान तम, सूद्र सोइ जानिये ॥

---

(१) कोप । (२) रस्सी । (३) रात । (४) अँधेरी । (५) सूर्योदय । (६) सूरज

इंद्रिन के ब्यापारनि, अत्यन्त निपुण बुद्धि।
तम रज दुहूँ करि, वैस्यहु प्रमानिये॥
अंतःकरण माहिँ, अहंकार बुद्धि जा के।
रजगुण बर्धमान, छत्री पहिचानिये॥
सत्वगुण बुद्धि एक, आतम-विचार जा के।
सुंदर कहत वही, ब्राह्मण बखानिये॥ १२॥

आतमा के बिषे देह, आइ करि नास होइ।
आतमा अखंड सदा, एकहि रहतु है॥
जैसे साँप कंचुकी[1] कूँ, लिये रहै कोउ दिन।
जीरन[2] उतारि करि, नूतन[3] गहतु है॥
जैसे द्रुम के पत्र, फूल फल आइ होत।
तिन के गये तेँ द्रुम, औरहु लहतु है॥
जैसे व्योम[4] माहिँ अभ्र[5], होइके बिलाइ जात।
ऐसोहि बिचार करि, सुंदर कहतु है॥ १३॥

खरी की डली सूँ, अंक लिखत बिचारियत।
लिखत लिखत वही, डली घिसि जातु है॥
लेखो समुझ्यो है जब, समुझ परी है तब।
जोइ कछु सही भयो, सोई ठहरातु है॥
दारुही[6] सूँ दारु मथि, प्रगट पावक भयो।
वहै दारु जारी पुनि, पावक समातु है॥
तैसेही सुंदर बुद्धि, ब्रह्म को बिचार करि।
करत करत-वह बुद्धिहू बिलातु है॥ १४॥

आप कूँ समुझि देखो, आपही सकल माहिँ।
आपही मैं सकल, जगत देखियतु है॥

(१) कँचली। (२) पुरानी। (३) नई। (४) आकाश। (५) बादल। (६) लकड़ी।

जैसे व्योम व्यापक, अखंड परिपूरण है ।
बादल अनेक नाना, रूप लेखियतु है ॥
जैसे भूमि घट जल, तरँग पावक दीप ।
वायु मैं बघूरा[1] सोई, बिस्त्र रेखियतु है ॥
ऐसेही बिचारत, बिचारहू लीन होइ ।
सुंदरही सुंदर, रहत पेखियतु है ॥ १५ ॥
देह को सँजोग पाइ, जीव ऐसो नाम भयो ।
घट के सँजोग घटाकासही कहायो है ॥
ईस्वर सकल बिराट[2] मैं बिराजमान ।
मठ के सँजोग मठाकास नाम पायो है ॥
महाकास माहिँ सब, घट मठ देखियत ।
बाहिर भितर एक, गगन[3] समायो है ॥
तैसेही सुंदर ब्रह्म, ईस्वर अनेक जीव ।
त्रिबिध उपाधि भेद, ग्रंथन मैं गायो है ॥ १६ ॥

॥ प्रश्न ॥

देह दुख पावै किधौं, इंद्रिय दुख पावै किधौं ।
प्राण दुख पावै किधौं, लहै न अहार कूँ ॥
मन दुख पावै किधौं, बुद्धि दुख पावै किधौं ।
चित्त दुख पावै किधौं, दुख अहंकार कूँ ॥
गुण दुख पावै किधौं, स्रोत्र दुख पावै किधौं ।
प्रकृति दुख पावै किधौं, पुरुष आधार कूँ ॥
सुंदर पूछत कछु, जानि न परत ता तैं ।
कौन दुख पावै गुरु, कहो या बिचारि कूँ ॥ १७ ॥

(१) बवंडर । (२) ब्रह्मांड । (३) आकाश

॥ उत्तर ॥

देहकूँ तौ दुख नाहिँ, देह पंचभूतन की ।
इंद्रिन कूँ दुख नाहिँ, दुख नाहिँ प्राण कूँ ॥
मनहू कूँ दुख नाहिँ, बुद्धिहू कूँ दुख नाहिँ ।
चित्तहू कूँ दुख नाहिँ, नाहिँ अभिमान कूँ ॥
गुणन कूँ दुख नाहिँ, स्रोत्रहू कूँ दुख नाहिँ ।
प्रकृति कूँ दुख नाहिँ, दुख न पुमान[1] कूँ ॥
सुंदर बिचारि ऐसे, सिष्य सुँ कहत गुरु ।
दुख एक देखियत, बीच के अज्ञान कूँ ॥ १८ ॥

पृथिवि भाजन अंग, कनक कुंडल पुनि ।
जलहि तरंग दोऊ, देखि करि मानिये ॥
कारण कारज एतो, प्रगटही स्थूल रूप ।
ताही तैँ नजर माहिँ, देखि करि आनिये ॥
पावक पवन व्योम, एतो नहिँ देखियत ।
दीपक बघूरा अभ्र, परतछ बखानिये ॥
आतमा अरूप अति, सूछम तैँ सूछम है ।
सुंदर कारण ता तैँ, देह मैँ न जानिये ॥ १९ ॥

जैन मति उहै जिन, राज कूँ नभूलि जाय ।
दान तप सील सत्य, भावना तैँ तरिये ॥
मन वच काय सुद्ध, सब सूँ दयालु रहै ।
दोष बुद्धि दूरि करि, दया उर धरिये ॥
बोध नाम तब जब, मन को निरोध[2] होइ ।
बोध के बिचार सोध, आतम को करिये ॥
सुंदर कहत ऐसे, जीवतही मुक्ति होइ ।
मुए तैँ मुकति कहै, ता कूँ परिहरिये ॥ २० ॥

(१) अपमान । (२) रोकना

देह ओर देखिये तै, देह पंचभूतन को।
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान है॥
प्राण ओर देखिये तौ, प्राण सबही के एक।
छुधा पुनि तृषा दोऊ, ब्यापत समान है॥
मन ओर देखिये तै, मन को सुभाव एक।
संकलप विकलप करै, सदाही अज्ञान है॥
आतम बिचार किये, आतमाही दीसै एक।
सुंदर कहत कोऊ, दूसरो न आन है॥ २१॥

इति बिचार को अंग संपूर्ण॥ २२॥

२३—सांख्यज्ञान को अंग।

॥ मनहर छंद॥

छिति[१] जल पावक, पवन नभ मिलि करि।
सब्द अरु परस[२], रूप रस गंध जू॥
स्रोत्र त्वक[३] चक्षु[४] घ्राण[५], रसना[६] रस को ज्ञान।
वाक[७] पाणि[८] पाद पायु[९] उपस्थहि[१०] बंध जू॥
मन बुधि चित अहंकार, ये चौबीस तत्त्व।
पंचबिंस[११] जीवतत्त्व, करत हैं द्वंद जू॥
षटबिंस[१२] जानु ब्रह्म, सुंदर सु निहकर्म।
व्यापक अखंड, एक रस निरसंध जू॥ १॥
स्रोत्र दिग[१३] त्वक वायु, लोचन प्रकास रवि।
नासिका अस्विनि[१४] जिह्वा, वरुण बखानिये॥

---

(१) पृथ्वी। (२) स्पर्श जो पवन का गुण है। (३) त्वचा। (४) आँख। (५) नाक। (६) जिह्वा। (७) बाणी। (८ हाथ। (९) गुदा। (१०) लिंग। (११) पच्चीस। (१२) छब्बीस। (१३) कान का अधीश दिशा। (१४) अश्विनी कुमार।

वाक अग्नि हस्त इंद्र, चरण उपेंद्र बल।
मेढ्[1] प्रजापति गुदा, मृत्युहू कूँ ठानिये॥
मन चंद्र बुद्धि बिधि, चित्त वासुदेव आहि।
अहंकार रुद्र को, प्रभाव करि मानिये॥
जा की सत्ता पाइ सब, देवता प्रकासित हैं।
सुंदर सो आतमाहिं, न्यारो करि जानिये॥२॥

॥ इंदव छंद॥

स्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं, रसना रस घ्राण सुगंध पियारो।
कोमलता त्वक[2] जानत है पुनि, बोलत है मुख सब्द उचारो॥
पाणि गहै[3] पद गौन करै, मलमूत्र तजै उभयो[4] अध-द्वारो।
जासु प्रकास प्रकासत हैं सब, सुंदर सोइ रहै घट न्यारो॥३॥
बुद्धि भ्रमै मन चित्त भ्रमै, अहंकार भ्रमै कछु जानत नाहीं।
स्रोत्र भ्रमै त्वक घ्राण भ्रमै, रसना दृग देखि दसो दिसि जाहीं॥
वाक भ्रमै कर पाद भ्रमै, गुदद्वार उपस्थ[5] भ्रमै कहु काहीं।
तेरे भ्रमाये भ्रमै सबही पुनि, सुंदर क्यूँ तु भ्रमै उन माहीं॥४॥
बुद्धि को बुद्धि रु चित्त को चित्त, अहं को अहं मन को मन वोई।
नैंन को नैंनहि बैन को बैनहि, कान को कान त्वचा त्वक होई॥
घ्राणको घ्राणहि जीभको जीभहि, हाथको हाथ पगै पग दोई।
सीसको सीसहि प्राण को प्राणहि, जीवको जीवहि सुंदर सोई॥५

॥ मनहर छंद॥

॥ प्रश्न॥

कैसे कै जगत यह, रच्यो है जगतगुरु।
मो सूँ कहौ प्रथमहिं, कौन तत्व कीनो है॥
पुरुष कि प्रकृति कि, महत्तत्त्व अहंकार।
किधौं उपजाय तम, रज सत तीनौं है॥

(१) लिंग। (२) त्वचा। (३) हाथ। (४) दोनों। (५) लिंग।

किधौं व्योम वायु तेज, आप के अवनि[1] कीन्ह ।
किधौं पंच विषय, पसार करि लीनो है ॥
किधौं दस इंद्री किधौं, अंतहकरण कीन्ह ।
सुंदर कहत किधौं, सकल विहीनो[2] है ॥ ६ ॥

॥ उत्तर ॥

ब्रह्म तेँ पुरुष अरु, प्रकृति प्रगट भई ।
प्रकृति तेँ महत्तत्त्व, पुनि अहंकार है ॥
अहंकारहू तेँ तीन गुण सत रज तम ।
तमहू तेँ महाभूत, विषय पसार है ॥
रजहू तेँ इंद्री दस, पृथक पृथक भईं ।
सत्तहू तेँ मन आदि, देवता बिचार है ॥
ऐसे अनुक्रम[3] करि, सिष्य सूँ कहत गुरु ।
सुंदर सकल यह मिथ्या भ्रम-जार है ॥ ७ ॥

॥ प्रश्न ॥

मेरो रूप भूमि है कि, मेरो रूप अप है कि ।
मेरो रूप तेज है कि, मेरो रूप पौन है ॥
मेरो रूप व्योम है कि, मेरो रूप इंद्री दस ।
अंतःकरण है कि, बैठो है कि गौन[4] है ॥
मेरो रूप त्रिगुण कि, अहंकार महत्तत्त्व ।
प्रकृतिपुरुष किधौं, बोलै है कि मौन है ॥
मेरो रूप स्थूल है कि, सूच्छम है मेरो रूप ।
सुंदर पूछत गुरु, मेरो रूप कौन है ॥ ८ ॥

॥ उत्तर ॥

तू तौ कछु भूमि नाहिं, अप तेज वायु नाहिं ।
व्योम पंच बिषै नाहिं, सो तौ भ्रमकूप है ॥

(१) पृथ्वी । (२) बिना । (३) सिलसिलेवार । (४) चलता या चंचल ।

तू तौ कछु इंद्रिय रु, अंतःकरण नाहिं।
तीन गुण तू तौ नाहिं, न तौ छांहिं धूप है॥
तू तौ अहंकार नाहिं, पुनि महत्तत्त्व नाहिं।
प्रकृतिपुरुष नाहिं, तू तौ स्वअनूप है॥
सुंदर विचार ऐसे, सिष्य सूं कहत गुरु।
नाहिं नाहिं[१] कहत हैं, सोई तेरो रूप है॥९॥

तेरो तौ स्वरूप है, अनूप चिदानंद घन।
देह तौ मलीन जड़, या विवेक कीजिये॥
तू तौ निहसंग निराकार, अविनासी अज।
देह तौ बिनासवंत, ताहि नाहिं धीजिये॥
तू तौ षट उरमी[२] रहित, सदा एक रस।
देह के बिकार सब, देह सिर दीजिये॥
सुंदर कहत यूं बिचारि, आपु भिन्न जानि।
पर की उपाधि कहा, आप खैंच लीजिये॥१०॥

देहही नरक रूप, दुख को न वारपार।
देहही है स्वर्ग रूप झूठो सुख मान्यो है॥
देहही कूं बंध मोक्ष, देहही अपरोक्ष[३] प्रोक्ष[४]।
देहही के क्रिया कर्म, सुभासुभ ठान्यो है॥
देहही मैं और देह, सुखी हूं बिलास करै।
ताही कूं समझे बिना, आतम बखान्यो है॥
दोउ देह तैं अलिप्त[५], दोउ को प्रकासक है।
सुंदर चैतन्य रूप, न्यारो करि जान्यो है॥११॥

देह हलै देह चलै, देहही सूं देह मिलै।
देह खाइ देह पिवै, देहही भरत है॥

---

(१) नेति नेति। (२) भूख, प्यास, शोक, मोह, जरा, मरण। (३) प्रत्यक्ष। (४) गुप्त। (५) न्यारा।

देहही हिमालय गलै, देहही पावक जलै ।
देह रण माहिँ जूझै, देहही परत है ॥
देहही अनेक कर्म, करत बिबिधि भाँति ।
चमक की सत्ता पाइ, लोह ज्यूँ फिरत है ॥
आतमा चैतन्य रूप, व्यापक साक्षी अनूप ।
सुंदर कहत सो तौ, जनमै न मरत है ॥ १२ ॥

॥ प्रश्नोत्तर ॥

देह यह किन को है, देह पंचभूतन को ।
पंचभूत कौन तैँ हैँ, तामस हंकार तैँ ॥
अहंकार कौन तैँ है, जा सूँ महत्तत्त्व कहैँ ।
महत्तत्त्व कौन तैँ है, प्रकृति मँझार तैँ ॥
प्रकृति सो कौन तैँ है, पुरुष है जा को नाम ।
पुरुष सो कौन तैँ है, ब्रह्म निराधार तैँ ॥
ब्रह्म अब जान्यो हम, जान्यो है तौ निस्चै कर ।
निस्चै हम कियो है, तौ चुप मुख द्वार तैँ ॥१३॥
एक घट माहिँ तौ सुगंध जल भरि राख्यो ।
एक घट माहिँ तौ दुर्गंध जल भरयो है ॥
एक घट माहिँ पुनि गंगोदक[1] राख्यो आनि ।
एक घट माहिँ आनि मदिराहू कस्यो है ॥
एक घृत एक तेल एक माहिँ नवनीत[2] ।
सबही मैँ सविता[3] को प्रतिबिंब पस्यो है ॥
तैसेही सुंदर ऊँच नीच मध्य एक ब्रह्म ।
देह भेद देखि भिन्न भिन्न नाम धस्यो है ॥१४॥
भूमि पर अप[4] अपहू के परे पावक है ।
पावक के परे पुनि वायुहू बहत है ॥

(१) गंगा जल। (२) मक्खन। (३) सूर्य। (४) पानी।

वायु परे व्योम व्योमहू के परे इंद्री दस।
इंद्रिन के परे अंत:करण रहत है॥
अंत:करण पर तीनौं गुण अहंकार।
अहंकार पर महत्तत्त्व कूँ लहत है॥
महत्तत्त्व पर मूलमाया माया परब्रह्म।
ताहि तँ परात पर सुंदर कहत है॥ १५॥
भूमि तौ विलीन[1] गंध गंध तो विलीन अप।
अपहू विलीन रस रस तेज खात है॥
तेज रूप रूप वायु वायुही सपर्स लीन।
सो परस व्योम सब्द तमही बिलात है॥
इंद्री दस रज मन देवता विलीन सत्त्व।
तीन गुण अहं महत्तत्त्व गलि जात है॥
महत्तत्त्व प्रकृति रु प्रकृति पुरुष लीन।
सुंदर पुरुष जाइ ब्रह्म मैं समात है॥ १६॥
आतमा अचल सुद्ध एक रस रहै सदा।
देह ब्यवहारन मैं देहही सोँ जानिये॥
जैसे ससिमंडल अभंग नहिँ भंग होइ।
कला आवै जाइ घट बढ़ सो बखानिये॥
जैसे द्रुम इस्थिर नदी के तट देखियत।
नदी के प्रवाह माहिँ चलत सो मानिये॥
तैसे आतमा अनंत देह सोँ प्रकास करै।
सुंदर कहत यूँ बिचारि भ्रम भानिये॥ १७॥
आतमा सरीर दोऊ एकमेक देखियत।
जब लगि अंत:करण मैं अज्ञान है॥

(१) मिला हुआ।

जैसे अँधियारी रैन घर मैं अँधेरो होय ।
आँखिन को तेज ज्यूँ को त्यूँही विद्यमान[1] है ॥
यद्यपि अँधेरे माहिँ नैन सूँ न सूझै कछु ।
तदपि अँधेरे सूँ अलेप[2] सो बखान है ॥
सुंदर कहत तौ लौँ एकमेक जानियत ।
जौ लौँ नहिँ प्रगट प्रकास ज्ञानभान[3] है ॥१८॥
देह जड़ देवल मैं आतम चैतन्य देव ।
याही कूँ समुझि करि या सूँ मन लाइये ॥
देवल कूँ बिनसत बेर नहिँ लागै कछु ।
देव तौ अभंग सदा देवल मैं पाइये ॥
देव की सकति[4] करि देवल की पूजा होत ।
भोजन बिबिधि भाँति भोगहू लगाइये ॥
देवल तैँ न्यारो देव देवल मैँ देखियत ।
सुंदर बिराजमान और कहाँ जाइये ॥ १९ ॥
प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और ।
चित्त सोँ न चंदन सनेह सोँ न सेहरा ॥
हृदय सोँ न आसन सहज सोँ न सिंहासन ।
भाव सी न सेज और सून्य[5] सोँ न गेहरा ॥
सील सोँ न स्नान अरु ध्यान सोँ न धूप और ।
ज्ञान सोँ न दीपक अज्ञान तम केहरा ॥
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और ।
आतम सोँ देव नाहिँ देह सोँ न देहरा ॥२०॥
स्वासोँ स्वास राति दिन सोहं सोहं होइ जाप ।
याही माला बारंबार दृढ़ कै धरतु है ॥

(१) मौजूद । (२) अछूता । (३) ज्ञान रूपी सूर्य्य । (४) शक्ति (५) आकाश ।

देह परे इंद्री परे अंतःकरण परे।
एकही अखंड जाप ताप[1] कूँ हरतु है॥
काठ की रुद्राच्छ की रु सूतहू की माला और।
इनके फिराये कछु कारज सरतु है॥
सुंदर कहत ता तैं आतमा चैतन्यरूप।
आप को भजन सो तो आपही करतु है॥२१॥
छीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहे।
नीर जैसे छाड़ि हंस, छीर कूँ गहतु है॥
कंचन मैं और धातु, मिलि करि बनि पर्‍यो।
सुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यूँ लहतु है॥
पावकहूँ दारु[2] मध्य दारुहू सोँ होइ रह्यो।
मथि करि काढ़ै वह, दारु कूँ दहतु है॥
तैसेही सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु।
भिन्न भिन्न करै सो तौ, साँख्यही कहतु है॥२२॥
अन्नमयकोस[3] सो तौ, पिंड है प्रगट यह।
प्राणमयकोस[4] पंच, वायू ही बखानिये॥
मनोमयकोस पंच, कर्म इंद्री हैं प्रसिद्ध।
पंच ज्ञान इंद्रिय, विज्ञानकोस जानिये॥
जाग्रत सुपन बिषे, कहिये चत्वारकोस।
सुषुपति माहिं कोस, आनँदमय मानिये॥
पंच कोस आतमा को, जीव नाम कहियत।
सुंदर संकर-भाष्य, सांख्य ये बखानिये॥ २३॥
जाग्रत अवस्था जैसे, सदन[5] मैं बैठियत।
तहाँ कछु होइ ताहि, भली भाँति देखिये॥

(१) पीड़ा। (२) काठ। (३) पेट। (४) प्राण, पान, समान, उदान, व्यान।
(५) घर, स्थान।

सुपन अवस्था जैसे, देहरी मैं बैठे जाइ ।
रहै जोई वहाँ ता की, बस्तु सब लेखिये ॥
सुषुपति भोहरे[1] मैं, बैठते न सूझि परै ।
वहाँ अंध घोर तहाँ, कछुही न पेखिये ॥
व्योम अनुस्यूत घर, देहरे भोहरे माहिँ ।
सुंदर साच्छी स्वरूप, तुरिया विसेषिये ॥ २४ ॥
जाग्रत के बिषे जीव, नैनन मैं देखियत ।
विविधि व्योहार सब, इँद्रिनि गहतु है ॥
सुपनेहूँ माहिँ पुनि, वैसेही व्योहार होत ।
नैनन तें आइ करि, कंठ मैं रहतु है ॥
सुषुपति हृदय मैं, विलीन होइ जात सब ।
जाग्रत सुपन की तैा, सुधि न लहतु है ॥
तीनहूँ अवस्था कूँही, साच्छी जब जानै आप ।
तुरिया सरूप[2] यह, सुंदर कहतु है ॥ २५ ॥

॥ इंदव छंद ॥

भूमि तैं सूच्छम[3] आप[4] कुँ जानहु, आप तैं सुच्छम तेज को अंगा
तेज तैं सूच्छम बायु बहै नित, बायु तैं सूच्छम व्योम[5] उतंगा
व्योम तैं सूच्छम हैं गुण तीन, तिहूँ तैं अहं महत्तत्त्व प्रसंगा
ताहु तें सूच्छम मूलप्रकृत्ति जु, मूल तैं सुंदर ब्रह्म अभंगा॥२६
ब्रह्म निरंतर व्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सब माहीँ।
ईसुर पावक रासि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये बरताहीँ ॥
जीव अनंत मसाल चिराग, सु दीप पतंग अनेक दिखाहीँ।
सुंदर द्वैत उपाधि मिटै जब, ईसुर जीव जुदे कछु नाहीँ ॥२७
ज्यूँ नर पावक लोह तपावत, पावक लोह मिले सु दिखाहीँ ।
चोट अनेक परै घन की सिर, लोह बधै[6] कछु पावक नाहीँ ॥

---

(१) पहाड़ खोह । (२) चतुर्थ अवस्था । (३) झीना । (४) पानी । (५) आकाश ।
(६) बढ़ै ।

पावक लीन भयो अपने घर, सीतल लोह भयो तब ताहीं।
त्यूं यह आतम देह निरंतर, सुंदर भिन्न रहै मिलि माहीं॥२८
आतम चेतन सुद्ध निरंतर, भिन्न रहै कहुं लिप्त[1] न होई।
है जड़ चेतन अंतःकर्ण जु, सुद्ध असुद्ध लिये गुण दोई॥
देह असुद्ध मलीन महा जड़, हालि न चालि सकै पुनि होई।
सुंदर तीन विभाग किये बिन, भूलि परै भ्रम तें सब कोई॥२९

॥ सवैया ॥

ब्रह्म अरूप अरूपी पावक, व्यापक जुगल न दीसत रंग।
देह दारु ते प्रगट देखियत, अंतःकरण अग्नि द्वय अंग॥
तेज प्रकास कल्पना तौं लगि, जौं लगि रहै उपाधि प्रसंग।
जहं के तहाँ लीन पुनि होई,सुंदर दोई सदा अभंग॥३०॥
देह सराव[2] तेल पुनि मारुत[3], बाती अंतःकरण बिचार।
प्रगट जोति यह चेतन दीसै, जा तैं भयो सकल उजियार॥
व्यापक अग्नि मथन करि जोये, दीपक बहुत भाँति विस्तार।
सुंदर अद्भुत रचना तेरी, तूही एक अनेक प्रकार॥ ३१ ॥
तिल मैं तेल दूध मैं घृत है, दारु माहिं पावक पहिचान।
पुहप माहिं ज्यूं प्रगट बासना,ईख माहिं रस कहत बखान॥
पोसति माहिं अफीम निरंतर, बनस्पती मैं सहद प्रमान।
सुंदर भिन्न मिल्यो पुनि दीसत,देह माहिं यूं आतम जान॥३२
जाग्रत स्वप्न सुषोपति तीनूं, अंतःकरण अवस्था पावै।
प्राण चलै जाग्रत अरु स्वप्न, सुषोपति मैं कछु वे न रहावै॥
प्राण गये तें रहै न कोऊ, सकल देखता ठाठ बिलावै।
सुंदर आतम तत्त्व निरंतर, सो तौ कितहूं जाय न आवै॥३३॥
पंद्रह तत्त्व स्थूल कुंभ[4] मैं, सूछम लिंग भर्यो ज्यूं तोय[5]।
इहाँ जीव आभास जानु उत, ब्रह्म इंद्रि प्रतिबिंब[6] जु दोय॥

(१) लीन। (२) दीया। (३) पवन। (४) घड़ा। (५) जल। (६) परछाईं।

घट फूटे जल गयो विलय ह्वै, अंतःकरण कहै नहिं कोय ।
तब प्रतिबिंब मिलै ससिही महिं, सुंदर जीव ब्रह्ममय होय ३४

॥ मनहर छन्द

जैसे व्योम कुंभ के, बाहिर अरु भीतर है ।
कोऊ नर कुंभ कूँ, हजार कोस ले गयो ॥
ज्यूँही व्योम इहाँ त्यूँही, उहाँ पुनि है अखंड ।
इहाँ न बिछोह न तौ, उहाँ मिलि के भयो ॥
कुंभ तौ नयौ पुरानौ, होइ के विनसि जाइ ।
व्योम तौ न ह्वै पुरानौ, न तो कछु ह्वै नयो ॥
तैसेही सुंदर देह, अवै रहै नास होइ ।
आतमा अचल, अविनासी है अनामयो[1] ॥ ३५ ॥
देह के सँजोगही तैं, सीत लगै घाम लगै ।
देह के सँजोगही तैं, छुधा तृषा पौन कूँ ॥
देह के सँजोगही तैं, कटुक[2] मधुर स्वाद ।
देह के सँजोग कहै, खाटो खारो लौन कूँ ॥
देह के सँजोग कहै, मुख तैं अनेक बात ।
देह के सँजोगही, पकरि रहै मौन कूँ ॥
सुंदर देह के सँजोग, दुख मानै सुख मानै ।
देह के सँजोग गये, दुख सुख कौन कूँ ॥ ३६ ॥
आप की प्रसंसा सुनि, आपही खुसाल[3] होइ ।
आपही की निंदा सुनि, आप मुरझाई है ॥
आपही कूँ सुख मानि, आप सुख पावत है ।
आपही कूँ दुख मानि, आप दुख पाई है ॥
आपही की रच्छा करै, आपही की घात करै ।
आपही हत्यारो होइ, गंगा जाइ न्हाई है ॥

(१) मायारहित । (२) कड़ुवा । (३) प्रसन्न ।

सुंदर कहत ऐसे, देहही कूँ आप मानि ।
निजरूप भूलि के, करत हाइ हाई है ॥ ३७ ॥

इति सांख्यज्ञान को अंग संपूर्ण ॥ २३ ॥

२४--अपने भाव को अंग ।

॥ इंदव छंद ॥

एकहि आपनु भाव जहाँ तहँ, बुद्धि के जोग तेँ विभ्रम भासै।
जो यह क्रूर तु क्रूर उहै पुनि, या के खसे तेँ उहै पुनि खासै॥
जो यह साधु तु साधु उहै पुनि, या के हँसे ते उहै पुनि हाँसै।
जैसोहि आप करै मुख सुंदर, तैसोहि दर्पण माहिँ प्रकासै ॥१

॥ मनहर छंद ॥

जैसे स्वान काच के, सदन[1] मध्य देखि और ।
भूँकि भूँकि मरत करत, अभिमान जू ॥
जैसे गज फटिक, सिला सूँ लरि तोरै दंत ।
जैसे सिंह कूप माहिँ, उझक[2] भुलान जू ॥
जैसे कोउ फेरि खात, फिरत सु देखै जग ।
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू ॥
अपनोही भ्रम सो तौ, दूसरो दिखाई देत ।
आप कूँ विचारे कोऊ, देखिये न आन जू ॥ २ ॥
नीच ऊँच भलो बुरो, सज्जन दुर्जन पुनि ।
पंडित मूरख सत्रु, मित्र रंक राव है ॥
मान अपमान पुन्न पाप सुख दुख सोऊ ।
स्वरग नरक बंध, मोच्छहू को चाव है ॥
देवता असुर भूत, प्रेत कीट[3] कुंजरहू[4] ।
पसु अरु पच्छी स्वान, सूकर बिलाव है ॥

---

(१) घर । (२) झाँक कर । (३) कीड़ा । (४) हाथी ।

सुंदर कहत यह, एकही अनेक रूप।
जोइ कछु देखिये सो, आपनोहि भाव है ॥ ३ ॥
याही के जागत काम, याही के जागत क्रोध।
याही के जागत लोभ, येही मोह-माता है ॥
याही को तैा याही बैरी, याही को तौ याही मित्र।
या कूँ याही सुख देत, याही दुखदाता है ॥
याही ब्रह्मा याही रुद्र, याही विष्णु देखियत।
याही देव दैत्य जच्छ, सकल सँघाता है ॥
याही को प्रभाव[1] सो तौ, याही कूँ दिखाई देत।
सुंदर कहत येही, आतमा विख्याता[2] है ॥ ४ ॥
याही को तौ भाव या कूँ, संक उपजावत है।
याही को तौ भाव याही, निसंक करतु है ॥
याही को तौ भाव या कूँ, भूत प्रेत होइ लगै।
याही को तौ भाव या की, कुमति हरतु है ॥
याही को तौ भाव याही, वायु को बघूरा[3] करै।
याही को तौ भाव याही, थिर कै धरतु है ॥
याही को तैा भाव याकूँ, धार मैं बहाइ देत।
सुंदर याही को भाव, याहि ले तरतु है ॥ ५ ॥
आपही को भाव सो तैा, आप कूँ प्रगट होत।
आपही आरोप करि, आप मन लायो है ॥
देवी अन्य देव कोऊ, भाव कूँ उपासै ताहि।
कहै मैं तैा पुत्र धन, इनहीं तैं पायो है ॥
जैसे स्वान हाड़ कूँ, चिचोरि करि मानै मोद[4]।
आपही को मुख फोरि, लोहू चाटि खायो है ॥

(१) स्वभाव। (२) प्रगट। (३) बवंडर। (४) हर्ष।

तैसेही सुंदर यह, आपही चैतन्य आहि।
अपने अज्ञान करि, और सूँ बँधायो है ॥ ६ ॥

इंद्व छंद ॥

नीचे तैँ नीचे रु ऊँचे तैँ ऊपर, आगे तैँ आगे रु पीछे तैँ पीछो।
दूर तैँ दूर नजीक तैँ नेरेहु, आड़े तैँ आड़ोहि तीछे तैँ तीछो॥
बाहिर भीतर भीतर बाहिर, ज्यूँ कोउ जानत त्यूँकर ईछो।
जैसेहि आपनो भाव है सुंदर, तैसोहि है दृग खोलि के बीछो[1] ॥७॥
आपने भाव तैँ सूर सो दीसत, आपने भाव तैँ चंद्र सो भासै।
आपने भाव तैँ तारे अनंत जु, आपने भाव तैँ बीज[2] चकासै॥
आपने भाव तैँ नूर है तेज है, आपने भाव तैँ जोति प्रकासै।
तैसोहि ताहि दिखावत सुंदर, जैसोहि होत है जाहि को आसै[3] ॥८
आपने भाव तैँ सेवक साहिब, आपने भाव सबै कोउ ध्यावै।
आपने भाव तैँ अन्य[4] उपासत, आपने भाव तैँ भक्तहु गावै॥
आपने भाव तैँ दुष्ट सँहारन, आपने भाव तैँ बाहिर आवै।
जैसोहि आपनो भाव है सुंदर, ताहि कुँ तैसोहि होइ दिखावै ॥९
आपने भाव तैँ दूर बतावत, आपने भाव नजीक बखान्यो।
आपने भाव तैँ दूध पियावत, आपने भाव तैँ बीठल जान्यो॥
आपने भाव तैँ चारि भुजा पुनि, आपने भाव तैँ सिंह सो मान्यो।
सुंदर आपने भाव के कारण, आपहि पूरण ब्रह्म पिछान्यो ॥१०
आपने भाव तैँ होइ उदास जु, आपने भाव तैँ प्रेम सूँ रोवै।
आपने भाव मिल्यो पुनि जानत, आपने भाव तैँ अंतर जोवै॥
आपने भाव रहै नित जाग्रत, अपने भाव समाधि मैँ सोवै।
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो, तैसोहि आप तहाँ तहाँ होवै ॥११॥

(१) छाँट लेना। (२) बिजली। (३) आशा। (४) दूसरा।

आपने भाव तैँ भूलि पर्‌यो भ्रम, देह स्वरूप भयो अभिमानी।
आपने भाव तैँ चंचलता अति, आपने भाव तैँ बुद्धि थिरानी॥
आपने भाव तैँ आप बिसारत, आपने भाव तैँ आतम ज्ञानी।
सुंदर जैसोहि भाव है आपनो, तैसोहि होइ गयो यह प्रानी ॥१२॥

इति अपने भाव को अंग संपूर्ण ॥ २४ ॥

२५--जगन्मिथ्या को अंग ।

॥ मनहर छंद ॥

किये। न बिचार कछु, भनक परी है कान ।
धारि आइ सुनि करि, डरि बिष खाये। है ॥
जैसे कोई अनछते[1], ऐसेही बुलाइयत ।
बार बीत गई पर, कोऊ नहीँ आये। है ॥
वेदहु वरणि के, जगत-तरु[2] ठाढ़ो किये। ।
अंत पुनि वेद, जर मूल तैँ उठाये। है ॥
तैसेही सुंदर या को, कोई एक पावै भेद ।
जगत को नाम सुनि, जगत भुलाये। है ॥ १ ॥
ऐसोही अज्ञान कोई, आय के प्रगट भये। ।
दिब्य-दृष्टि दूर गई, देखै चाम-दृष्टि कूँ ॥
जैसे एक आरसी, सदाही हाथ माँहिँ रहै ।
सुमुख न देखै फेर, फेर देखै पृष्ठि[3] कूँ ॥
जैसे एक व्योम पुनि, बादर सूँ छाइ रह्यो ।
व्योम नहिँ देखत, देखत बहु बृष्टि[4] कूँ ॥
तैसे एक ब्रह्मही, बिराजमान सुंदर है ।
ब्रह्म कूँ न देखै कोऊ, देखै सब सृष्टि[5] कूँ ॥ २॥

(१) बिना इच्छा के । (२) संसाररूपी वृक्ष । (३) पीठ । (४) बर्षा । (५) रचना ।

अनछतो जगत, अज्ञान तैं प्रगट भयो।
जैसे कोई बालक, बैताल देखि डर्‌यो है॥
जैसे कोई सुपने मैं, दाब्यौ है ओथारे आइ।
मुख तैं न आवै बोल, ऐसो दुख पर्‌यो है॥
जैसे अँधियारी रैन, जेवरी न जानै ताहि।
आपहि तैं साँप मानि, भय अति कर्‌यो है॥
तैसेही सुंदर एक, ज्ञान के प्रकास बिनु।
आप दुख पाय आय, आप पचि मरयो है॥३॥
मृत्तिका समाइ रही, भाजन के रूप माहिँ।
मृत्तिका को नाम मिटि, भाजनहिँ गह्यो है॥
कनक समाइ ज्यूँही, होइ रह्यो आभूषण।
कनक कहै न कोई, आभूषण कह्यो है॥
बीजहू समाइ करि, बृच्छ होइ रह्यो पुनि।
बृच्छही कूँ देखियत, बीज नहिँ लह्यो है॥
सुंदर कहत यह, यूँही करि जान्यो सब।
ब्रह्मही जगत होइ, ब्रह्म दूरि रह्यो है॥४॥
कहत है देह माहिँ, जीव आइ मिलि रह्यो।
कहाँ देह कहाँ जीव, बृथा चूक परयो है॥
बूड़िबे के डर तैं, तरन को उपाव करै।
ऐसे नहिँ जानै यह, मृगजल[१] भरयो है॥
जेवरी को साँप मानि, सीप बिषे रूपो जानि।
और को औरहि देखि, यूँही भ्रम करयो है॥

(१) बालू के मैदान में गर्मी के दिनों में दोपहर के समय सूरज की किरनें पड़कर नाचने लगती हैं और जल होने का भ्रम पैदा करती हैं उसे मृग-जल कहते हैं।

सुंदर कहत यह, एकही अखंड ब्रह्म ।
ताहि कूँ पलटि के, जगत नाम धर्यो है ॥ ५ ॥

इति जगन्मिथ्या को अंग संपूर्ण ॥ २५ ॥

२६--अद्वैतज्ञान को अंग ।

इंदव छंद-(प्रश्नोत्तर) ॥

हौ तुम कौन? हुँ ब्रह्म अखंडित, देह मैं क्यूँ नहिं? देह के नेरे।
बोलत कैसे? कहूँ नहिं बोलत, जानिये कैसे? ज्ञान है तेरे ॥
दूर करौ भ्रम निश्चय धारिक, हो गुरुदेव कहौं नित टेरे ।
हौ तुम ऐसे तुहूँ पुनि ऐसेहि, दोइ नहीं नहिं द्वैतहि मेरे ॥१

॥ बोधोक्ति ॥

हूँ कछु और कि तूँ कछु और, कि ये कछु और कि सो कछु औरै ।
हूँ अरु तूँ यह है कछु सो पुनि, बुद्धि बिलास भयो झकझोरै ॥
हूँ नहिं तूँ नहिं है कछु सो नहिं, बूझ बिना जितही तित दौरै ।
हूँ पुनि तूँ पुनि है कछु सो पुनि, सुंदर व्यापि रह्यो सब ठौरै ॥२
उत्तम मध्यम और सुभासुभ, भेद अभेद जहाँ लगि जो है ।
दीसत भिन्न तवो अरु दर्पण, वस्तु बिचारत एकहि लो है ॥
जो सुनिये अरु दृष्टि परै कछु, वा बिन और कहूँ अब को है ।
सुंदर सुंदर व्यापि रह्यो सब, सुंदर मैं पुनि सुंदर सो है ॥३
ज्यूँ वन एक अनेक भये द्रुम, नाम अनंतनि जातिहु न्यारी ।
वापि तड़ाग रु कूप नदी सब, है जल एक सु देखु निहारी ॥
पावक एक प्रकास बहू बिधि, दीप चिराग मसालहु वारी ।
सुंदर ब्रह्म बिलास अखंडित, भेद अभेद कि बुद्धि सु टारी ॥४

एक सरीर मैं अंग भये बहु, एक धरा[1] पर धाम[2] अनेका।
एक सिला[3] महँ कोर किये सब, चित्र बनाइ धरे इक ठेका॥
एक समुद्र तरंग अनेकहु, कैसे कै कीजिये भिन्न बिबेका।
द्वैत कछू नहिँ देखिये सुंदर, ब्रह्म अखंडित एक को एका॥५

ज्यूँ मृत्तिका घट नीर तरंगहिँ, तेज मसाल किये जु बहूता।
वायु बघूरनि गाँठ परी बहु, बादल व्योम सु व्योम जु भूता॥
बृच्छ सु बीजहि बीज सु बृच्छहि, पूत सु बापहि बाप सु पूता।
बस्तु बिचारत एकहि सुंदर, तान रु बान[4] तु देखिय सूता[5] ॥६

भूमिहु चेतन आपहु चेतन, तेजहु चेतन है जु प्रचंडा।
वायुहु चेतन व्योमहु चेतन, सब्दहु चेतन पिंड ब्रह्मंडा॥
है मन चेतन बुद्धिहु चेतन, चित्तहु चेतन आहि उदंडा[6]।
जो कछु नाम धरै सोइ चेतन, चेतन सुंदर ब्रह्म अखंडा॥७

एक अखंडित ब्रह्म बिराजत, नाम जुदो करि बिस्व कहावै।
एकहि ग्रंथ पुराण बखानत, एकहि दत्त बसिष्ट सुनावै॥
एकहि अर्जुन उद्धव सूँ कहि, कृष्ण कृपा करिके समुझावै।
सुंदर द्वैत कछू मति जानहु, एकहि व्यापक वेद बतावै॥८॥

॥ मनहर छंद – (प्रश्नोत्तर) ॥

सिष्य पूछै गुरदेव, गुरु कहै पूछै सिष्य।
मेरे एक संसय है, क्यूँ न पूछै अबही॥
तुम कह्यो एक ब्रह्म, अजहूँ मैं कहूँ एक।
एकता अनेकता को, यह भ्रम सबही॥
भ्रम यह कौन कूँ है, भ्रमही कूँ भ्रम भयो।
भ्रमही कूँ भ्रम कैसे, तू न जानै कबही॥

---

(१) पृथ्वी। (२) स्थान। (३) पत्थर। (४) ताना और वाना। (५) सूत।
(६) प्रबल।

कैसे करि जानौं प्रभु, गुरु कहै निस्चै धरि।
निस्चै ऐसे जान्यौ अब, एक ब्रह्म तबही ॥ ९ ॥

॥ बोधोक्ति ॥

ब्रह्म है ठौर को ठौर, दूसरो न कोऊ और।
वस्तु को बिचार किये, वस्तु पहिचानिये ॥
पंच तत्त्व तीन गुण, विस्तरे बिबिधि[1] भाँति।
नाम रूप जहाँ लगि, मिथ्या माया मानिये ॥
सेसनाग आदि दे के, वैकुंठ गोलोक पुनि।
बचन बिलास सब, भेद भ्रम मानिये ॥
न तो कछु उरझ्यो न सुरझ्यो, कहौं सो कौन।
सुंदर सकल यह, ऊबा-बाई[2] जानिये ॥ १० ॥
प्रथमहि देह मैं तें, बाहिर कूं चूकि परयो।
इंद्रिय व्यापार सुख, सत्य करि जान्यो है ॥
कोउक सँजोग पाइ, सतगुरु सूँ भैंट भई।
उन उपदेस देके, भीतर कूँ आन्यो है ॥
भीतर के आवतही, बुद्धि को प्रकास भयो।
कौन देह कौन मैं, जगत किन मान्यो है ॥
सुंदर बिचारत यूँ उपजै अद्वैत ज्ञान।
आप कूं अखंड ब्रह्म, एक पहिचान्यो है ॥ ११ ॥

॥ हंसाल छन्द ॥

सकल संसार विस्तार करि बरणियो।
स्वर्ग पाताल मृत ब्रह्म ही है ॥
एक तैं गिनत ही गिनिये जो सौ लगैं।
फेरि करि एक को एकही है ॥

(१) अनेक। (२) घबराहट।

ये नहीं ये नहीं[1] रहै अवसेष[2] सो ।
अंत ही वेद ने यूँ कही है ॥
कहत सुंदर सही अपनपौ जानु जब ।
आपने आप मैं आपही है ॥ १२ ॥
एक तूँ दोय तूँ तीन तूँ चार तूँ ।
पाँच तूँ तत्व तैं जगत कीयो ॥
नाम अरु रूप है बहुत बिधि बिस्तर्यो ।
तुम बिना और कोउ नाहिं बीयो[3] ॥
राव तूँ रंक तूँ दीन तूँ दानि तूँ ।
दोइ करि मेल तैं लीय दीयो ॥
सकलही एह तुव माहिं उपजै खपै ।
कहत सुंदर बड़ो बिपुल[4] हीयो ॥ १३ ॥

मनहर छंद ॥

तोही मैं जगत यह, तूँही है जगत माहिं ।
तो मैं अरु जगत मैं, भिन्नता कहाँ रही ॥
भूमिही तैं भाजन[5], अनेक बिधि नाम रूप ।
भाजन बिचारि देखे, उहै एकही मही[6] ॥
जल तैं तरंग फेन, बुदबुदा अनेक भाँति ।
सोउ तौ बिचारे एक, वहै जल है सही ॥
जेते महापुरुष हैं, सब को सिद्धांत एक ।
सुंदर अखिल[7] ब्रह्म, अंत वेद ये कही ॥ १४ ॥
जैसे ईख रस की मिठाई, भाँति भाँति भई ।
फेरि करि गारे, ईखु रसही लहतु है ॥

(१) नेति नेति । (२) बाक़ी । (३) दूसरा । (४) बड़ा । (५) बर्तन, पात्र । (६) पृथ्वी । (७) पूर्ण ।

जैसे घृत थीज के, डरा सैँ बँधि जात पुनि[1] ।
फेर पिघले तेँ वह, घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमि के, पषाण हू सैँ देखियत ।
सो पषाण फेरि पानी, होय के बहतु है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत है ब्रह्ममय ।
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥ १५ ॥
जैसे काठ कोरि[2] ता मैँ, पूतरी बनाय राखी ।
सो बिचारि देखिये तौ, उहै एक दारु[3] है ॥
जैसे माला सूतहू की, मणिकाहू सूतहि के ।
भीतरहू पोयो पुनि, सूतही को तार है ॥
जैसे एक समुद्र के, जलही को लौण भयो ।
सोउ तो बिचारे पुनि, उहै जल खार है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय ।
ब्रह्म सो जगतमय, याही निरधार है ॥ १६ ॥
जैसे एक लोह के हथियार नाना बिध किये ।
आदि मध्य अंत एक, लोहही प्रमानिये ॥
जैसे एक कंचन मैँ, भूषण अनेक भये ।
आदि मध्य अंत एक, कंचनही जानिये ॥
जैसे एक मैन[4] के, सँवारे नर हाथी यह ।
आदि अंत मध्य एक, मैनही बखानिये ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत सो ब्रह्ममय ।
ब्रह्म सो जगतमय, निस्चै करि मानिये ॥ १७ ॥

---

(१) जैसे घी जमकर डला या थक्का सा हो जाता है। (२) कुरेद कर। (३) काठ। (४) कामदेव।

ब्रह्म मैं जगत यह, ऐसी बिधि देखियत।
जैसी बिधि देखियत, फूल री महीर[1] मैं॥
जैसी बिधि गिलिम, दुलीचे मैं अनेक भाँति[2]।
जैसी बिधि देखियत, चूनरीहू चीर मैं॥
जैसी बिधि काँगुरेहु,[3] कोट पर देखियत।
जैसी बिधि देखियत, बुदबुदा नीर मैं॥
सुंदर कहत लीक, हाथ पर देखियत।
जैसी बिधि देखियत, सीतला[4] सरीर मैं॥ १८॥

ब्रह्म अरु माया जैसे, सिव अरु सक्ति पुनि।
पुरुष प्रकृति दोऊ, कहि के सुनाये हैं॥
पति अरु पतनी[5], ईसुर अरु ईसुरीहु[6]।
नारायण लच्छमी, द्वै बचन कहाये हैं॥
जैसे कोई अर्धनारी, नटेसुर रूप धरै[7]।
एक बीजहू तें दोइ, दालि नाम पाये है॥
तैसेही सुंदर वस्तु, ज्यूँ है त्यूँही एकरस।
उभय[8] प्रकार होइ, आपही दिखाये हैं॥ १९॥

॥ इंदव छंद ॥

ब्रह्म निरीह[9] निरामय[10] निर्गुन, नित्य निरंजन और न भासै
ब्रह्म अखंडित है अध ऊरध[11], बाहिर भीतर ब्रह्म प्रकासै॥
ब्रह्महि सूच्छम स्थूल जहाँ लगि, ब्रह्महि साहिब ब्रह्महि दासै
सुंदर और कछू मत जानहु, ब्रह्महि देखत ब्रह्म तमासै[12]॥२०

(१) मट्ठा। (२) जैसे ग़लीचे में तरह २ के बेल बूटे बनाते हैं। (३) कँगूरा। (४) बिस्फोटक का रोग। (५) स्त्री। (६) लक्ष्मी। (७) जैसे बहुरूपिया आधा पुरुष आधा स्त्री का रूप धरता है। (८) दो। (९) चेष्टा रहित। (१०) माया रहित। (११) नीचे ऊँचे। (१२) तमाशा।

ब्रह्महिमाहिँबिराजतब्रह्महि,ब्रह्मबिनाजिनिऔरहिजानौ।
ब्रह्महि कुंजर[1] कीटहु ब्रह्महि, ब्रह्महि रंक रु ब्रह्महि रानौ ।
कालहि ब्रह्म स्वभावहु ब्रह्महि, कर्महु जीवहु ब्रह्म बखानौ ॥
सुंदरब्रह्मबिनाकछुनाहिँन,ब्रह्महि जानि सबै भ्रम भानौ ॥२१

आदि हुतो सुहि अंतहि है पुनि,मध्य कहा कछु और कहावै।
कारण कारज नाम धरे पुनि, कारज कारण माहिँ समावै॥
कारज देखि भयो बिच बिभ्रम,कारण देखि बिभर्म[2] बिलावै।
सुंदर निस्चय येअभिअंतर, द्वैत गये फिरि द्वैत नआवै ॥२२॥

॥ मनहर छंद ॥

द्वैत करि देखै जब द्वैतहि दिखाई देत ।
एक करि देखै तब, उहै एक अंग है ॥
सूरज कूँ देखै जब, सूरज प्रकासि रह्यो ।
किरण कूँ देखै तो किरण नाना रंग है ॥
भ्रम जब भयो तब, माया ऐसो नाम धर्यो ।
भ्रम के गये तेँ, एक ब्रह्म सरबंग है ॥
सुंदर कहत या की, दृष्टिहू को फेर भयो ।
ब्रह्म अरु माया के तो, माथे नाहिँ संग[3] है॥२३॥

स्रोत्र कछु और नाहिँ, नेत्र कछु और नाहिँ ।
नासा कछु और नाहिँ, रसना न और है ॥
त्वक[4] कछु और नाहिँ, वाक[5] कछु और नाहिँ।
हाथ कछु और नाहिँ, पाँवन की दौर है ॥
मन कछु और नाहिँ, बुद्धि कछु और नाहिँ ।
चित्त कछु और नाहिँ, अहंकार तौर है ॥

---

(१) हाथी । (२) भ्रम । (३) सींघ । (४) खाल । (५) बाणी ।

सुंदर कहत एक, ब्रह्म बिना और नाहिँ ।
आपहि मैँ आप व्यापि, रह्यो सब ठौर है ॥२४॥

इति अद्वैतज्ञान को अंग संपूर्ण ॥ २६ ॥

२७--ब्रह्म निष्कलंक को अंग ।

॥ मनहर छंद ॥

एक कोउ दाता गऊ, ब्राह्मण कूँ देत दान ।
एक कोउ दयाहीन, मारत निसंक है ॥
एक कोउ तपस्वी, तपस्या माहिँ सावधान ।
एक कोउ काम क्रीड़ा, कामिनि को अंक है ॥
एक कोउ रूपवंत, अधिक बिराजमान ।
एक कोउ कोढ़ि कोढ़, चुवत करंक[१] है ॥
आरसी मैँ प्रतिबिंब, सबही को देखियत ।
सुंदर कहत ऐसे, ब्रह्म निष्कलंक है ॥ १ ॥
रवि के प्रकास तैँ, प्रकास होत नेत्रन को ।
सब कोउ सुभासुभ, कर्म कूँ करतु है ॥
कोउ जज्ञ दान तप, जप नेम व्रत कोउ ।
इंद्रि बस करि कोउ, ध्यान कूँ धरतु है ॥
कोउ परदारा, परधन कूँ तकत जाइ ।
कोउ हिंसा करि करि, उदर भरतु है ॥
सुंदर कहत ब्रह्म, साच्छीरूप एकरस ।
याही मैँ उपजि करि, याही मैँ मरतु है ॥ २ ॥
जैसे जल जंतु, जलही मैँ उतपन्न होय ।
जलही मैँ बिचरत, जल के आधार है ॥

---

(१) मज्जा पीप आदि ।

जलही मैं क्रीड़ा करि, बिबिधि ब्योहार होत।
काम क्रोध लोभ मोह, जल मैं संहार है॥
जल कूँ न लागै कछु, जीवन के राग द्वेष।
उनहीं के क्रिया कर्म, उनहीं के लार है॥
तैसेही सुंदर यह, ब्रह्म मैं जगत सब।
ब्रह्म कूँ न लागै कछु, जगत बिकार है॥ ३॥
स्वेदज जरायुज अंडज, उदभिज पुनि[१]।
चार खानि तिन के, चौरासी लच्छ जंतु हैं॥
जलचर थलचर, व्योमचर भिन्न भिन्न।
देह पंच भूतन की, उपजि खपंत हैं॥
सीत घाम पवन, गगन मैं चलत आइ।
गगन अलिप्त जा में मेघहू अनंत हैं॥
तैसेही सुंदर यह, सृष्टि सब ब्रह्म माहिं।
ब्रह्म निष्कलंक सदा, जानत महंत हैं॥ ४॥

इति ब्रह्म निष्कलंक को अंग संपूर्ण॥ २७॥

२८--शूरातन को अंग।

॥ मनहर छंद॥

सुनत नगारे चोट, बिकसै[२] कमल मुख।
अधिक उछाह[३] फूल्यो, मायहू[४] न तन में॥
फेरै जब साँग[५] तब, कोई नहिं धीर धरै।
कायर कंपायमान, होत देखि मन मैं॥
कूद के पतंग जैसे, परत पावक माहिं।
ऐसे टूटि परै बहु, साँवत के घन[६] मैं॥

(१) चार खान के जीव अर्थात पसीने से पैदा हुए, गर्भ से पैदा हुए, अंडे से पैदा हुए, धरती से उगे हुए। (२) खिल जाता है। (३) आनंद। (४) समाता है। (५) बरछी। (६) शूरबीर के झुंड में।

मारि घमसान करि, सुंदर जुहारै[1] स्याम।
सोई सूरबीर रोपि, रहै जाइ रन मैं ॥ १ ॥
हाथ मैं गहै खड़्ग, मारिबे कूँ एक पग।
तन मन आपनो, समरपण कीन्हो है ॥
आगे करि मीच[2] कूँ जु, परयो डाकि रण बीच।
टूक टूक होइ के, भगाइ दल दीन्हो है ॥
खाइ लौन स्याम को, हरामखोर कैसे होइ।
नाम याद जगत मैं, जीत्यो पन तीनो है ॥
सुंदर कहत ऐसो, कोउ एक सूर बीर।
सीस कूँ उतारि के, सुजस जाइ लीन्हो है ॥२॥
पाँव रोपि रहै, रण माहिं रजपूत कोऊ।
हय गज गाजत, जुरत जहाँ दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई, सिंधु राग पुनि।
सुनतहि कायर की, छूटि जात कल है ॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै।
मार मार करत, परत खलभल[3] है ॥
ऐसे जुद्ध मैं अडिग्ग, सुंदर सुभट सोई।
घर माहिं सूरमा, कहावत सकल है ॥ ३ ॥
असन[4] बसन[5] बहु, भूषण सकल अंग।
संपति बिबिध भाँति, भरयो सब घर है ॥
स्रवण नगारो सुनि, छिनक मैं छाड़ि जात।
ऐसे नहिं जानै कछु, मेरो वहाँ मर है ॥
मन मैं उछाह, रण माहिं टूक टूक होइ।
निर्भय निसंक वा के, रंचहू न डर है ॥

---

(१) बंदगी करता है। (२) मौत। (३) खलबल, घबराहट। (४) भोजन। (५) बस्त्र।

सुंदर कहत कोउ, देह को ममत्व नाहिं।
सूरमा को देखियत, सीस बिनु धर है॥ ४॥
जूझिबे को चाव जा के, ताकि ताकि करै घाव।
आगे धरि पाँव फिर, पीछे न सँभारि है॥
हाथ लिये हथियार, तीछन लगाये धार।
बार नहिं लागै सब, पिसुन[1] प्रहारि है॥
ओट नहिं राखै कछु, लोटपोट होइ जाइ।
चोट नहिं चूकै रिपु, सीस को उतारिहै॥
सुंदर कहत ताहि, नेकहू न सोच पोच।
सोई सूर बीर धीर, मर जाइ मारिहै॥ ५॥
अधिक आजानबाहु,[2] मन मैं उछाह किये।
दिये गज ढाहि, मुख बरषत नूर है॥
काढ़े जब तरवार, बार सब ठाढ़े होइ।
अति बिकराल[3] पुनि, देखत करूर[4] है॥
नेक न उसाँस लेत, फौज कूँ फिटाइ[5] देत।
खेत नहिं छाड़ै, मारि करै चकचूर है॥
सुंदर कहत ता की, कीरति प्रसिद्ध होइ।
सोई सूर बीर धीर, स्याम के हजूर है॥ ६॥
ज्ञान को कवच[6] अंग, काहू कूँ न होइ भंग।
टोप सीस झलकत, परम बिबेक है॥
तन ताजी[7] असवार, लीये समसेर[8] सार।
आगेही कूँ पाँव धरै, भागने की टेक[9] है॥
छूटत बंदूक बान, मचै जहाँ घमसान।
देखि के पिसुन[1] दल, मारत अनेक है॥

---

(१) दुष्ट। (२) लम्बी बाँह जो घुटने तक पहुँचे। (३) भयानक। (४) कठोर। (५) हटादेना। (६) बखतर। (७) घोड़ा। (८) तलवार। (९) प्रण।

सुंदर सकल लोक माहिँ, ता को जैजैकार।
ऐसो सूर बीर कोऊ, कोटिन मैँ एक है ॥ ७ ॥
सूर बीर रिपु सनमुख, देखि चोट करै।
मारै तब ताकि ताकि, तरवार तीर सूँ ॥
साधु आठौँ जाम बैठो, मनही सूँ जुद्ध करै।
ज़ा के मुँह माथो नहिँ, देखिये सरीर सूँ ॥
सूर बीर भूमि पर, दूरही तैँ दौरि लगै।
साधु सोँ न कोप करै, राखै धरि धीर कूँ ॥
सुंदर कहत तहाँ, काहू को न पाँव टिकै।
साधु को संग्राम है, अधिक सूर बीर सूँ ॥ ८ ॥
खैँचि करड़ी कमान, ज्ञान को लगायो बान।
मार्‍यो महाबल मन, जग जिन रान्यो है ॥
ता के अगवानी पंच, जोधाहु कतल किये।
और रह्यो पर्‍यो सब, अरि दल भान्यो[१] है ॥
ऐसो कोऊ सुभट[२], जगत मैँ न देखियत।
जा के आगे कालहू सौँ, कंपि के परान्यो[३] है ॥
सुंदर कहत ता की, सोभा तिहूँ लोक माहिँ।
साधु सोँ न सूर बीर, कोई हम जान्यो है ॥ ९ ॥
काम सोँ प्रबल महा, जीते जिन तीन लोक।
सो तौ एक साधु के, बिचार आगे हार्‍यो है ॥
क्रोध सोँ कराल जा के, देखत न धीर धरै।
सोउ साध छिमा के, हथियार सूँ बिदार्‍यो[४] है ॥
लोभ सोँ सुभट साधु, तोष[५] सूँ गिराय दियो।
मोह सोँ नृपति साधु, ज्ञान सूँ प्रहार्‍यो[६] है ॥

(१) नाश किया। (२) योधा। (३) भागा है। (४) फाड़ा। (५) संतोष। (६) मारा।

सुंदर कहत, ऐसो साधु कोउ सूर बीर ।
ताकि ताकि सबही, पिसुन दल मारचो है ॥१०॥
मारे काम क्रोध सब, लोभ मोह पीसि डारे ।
इंद्रिहु कतल करि, कियो रजपूतो है ॥
मार्‍यो महामत्त मन, मारे अहंकार भीर[1]।
मारे मद मत्सर हू, ऐसो रण रूतो है ॥
मारी आसा तृष्णा पुनि, पापिनी साँपिनी दोऊ।
सब को प्रहार करि, निज पद पहूतो है ॥
सुंदर कहत ऐसो, साधु कोई सूर बीर ।
बैरी सब मारि के, निचिन्त होइ सूतो है ॥११॥
कियो जिन मन हाथ, इंद्रिन को सब साथ ।
घेरि घेरि आपनेही, नाथ सूँ लगाये हैं ॥
औरहू अनेक बैरि, मारे सब जुद्ध करि ।
काम क्रोध लोभ मोह, खोद के बहाये हैं ॥
कियो है संग्राम जिन, दियो है भगाइ दल ।
ऐसे महा सुभट, सु ग्रंथन में गाये हैं ॥
सुंदर कहत और, सूर यूँही खपि गये ।
साधु सूर बीर वेई, जगत मैं आये हैं ॥ १२ ॥
महा मत्त हाथी मन, राख्यो है पकरि जिन ।
अतिहि प्रचंड[2] जा मैं, बहुत गुमान है ॥
काम क्रोध लोभ मोह, बाँधे चारैं पाँव पुनि ।
छूटने न पावै नेक, प्राण पीलवान[3] है ॥
कबहूँ जो करै जोर, सावधान साँझ भोर ।
सदा एक हाथ में, अंकुस गुरु ज्ञान है ॥

(१) भारी, डरावना । (२) महाबली । (३) हाथीवान ।

सुंदर कहत और, काहू के न बस होइ ।
ऐसो कौन सूर बीर, साधु के समान है ॥ १ ॥
॥ इति सूरातन को अंग ॥ २८ ॥

२९--साधु को अंग ।

॥ इंदव छंद ॥

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको ।
सुद्ध हृदय मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जी को ॥
गोष्टि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसो प्रवाह नदी को ।
ताहितैंजानिकरौनिसिबासर, साधुकोसंगसदाअतिनीको॥१
जो कोइ जाइ मिलै उन सूँ नर, होत पवित्र लगै हरि रंगा ।
दोष कलंक सबै मिटि जाइ सु, नीचहु जाइ जु होत उतंगा[1] ॥
ज्यूँ जल और मलीन महाअति, गंगमिल्योहुइजातहि गंगा ।
सुंदर सुद्ध करै ततकाल जु, है जग माहिँ बड़ो सतसंगा ॥२॥
ज्यूँ लट भृंग करै अपने सम, तासन भिन्न कहै नहिँ कोई ।
ज्यूँ द्रुम[2] और अनेकन भाँतिन, चंदन के ढिग चंदन होई ॥
ज्यूँ जल छुद्र[3] मिलै जब गंगहि, होइ पवित्र उहै जल सोई ।
सुंदर जातिसुभाव मिटै सब, साधुकिसंगतिसाधुहिहोई ॥३॥
जो कोउ आवत है उनके ढिग, वाहि सुनावत सब्द सँदेसो ।
ताहि कूँ तैसिहि औषधि लावत, जाहिकूँरोगहिजानतजैसो॥
कर्म कलंकहि काटत हैं सब, सुद्ध करैं पुनि कंचन तैसो ।
सुंदर बस्तु बिचारत हैं नित, संतन को जु प्रभावहि ऐसो॥४॥
जो परब्रह्म मिल्यो कोउ चाहत, तौ नित संत समागम कीजै
अंतर मेटि निरंतर ह्वै करि, ले उन कूँ अपनो मन दीजै ॥

(१) ऊँचा। (२) पेड़। (३) तुच्छ थोड़ा, अपवित्र।

वे मुखद्वार उचार करैं कछु, सो अनयास सुधा रस पीजै।
सुंदर सूर प्रकास भयो जब, और अज्ञान सबै तम छीजै ॥५
जा दिन से सतसंग मिल्यो तब, ता दिन तैं भ्रम भाजि गयो है।
और उपाय थके सबही तब, संतनि अद्वय ज्ञान दयो है॥
पोत प्रवाल[1]हि क्यूँ करि छूवत, एक अमोलक लाल लयो है।
कौन प्रकार रहै रजनी तम, सुंदर सूर प्रकास भयो है ॥६॥
संत सदा सब को हित बंछत, जानत है नर बूड़त काढ़ै।
दे उपदेस मिटाय सबै भ्रम, ले करि ज्ञान जहाजहि चाढ़ै ॥
जे विषया सुख नाहिन छाड़त, ज्यूँ कपि[2] मूठ गहै सठ गाढ़ै।
सुंदर वे दुख कूँ सुख मानत, हाटहि हाट बिकावत आढ़ै ॥७
सो अनयास[3] तरै भव-सागर, जो सतसंगत मैं चलि आवै।
ज्यूँ कनिहार[4] न भेद करै कछु, आइ चढ़ै तिहि नाव चढ़ावै॥
ब्राह्मण छत्रिय वैस्य रु सूद्र, मलेच्छ चँडालहि पार लगावै।
सुंदर बेर नहीं कछु लागत, या नरदेह अभय पद पावै॥८॥
ज्यूँ हम खाइ पिवैं अरु ओढ़हिं, तैसेहि ये सब लोक बखानै।
ज्यूँ जलमैंससिकेप्रतिबिंबहि[5],आप समा जलजंतु प्रमानै॥
ज्यूँ खग[6] छाँह धरा पर दीसत, सुंदर पंछि उड़ै असमानै।
त्यूँ सठ देहन के कृत देखत, संतन की गति क्यूँ कोउ जानै ॥९
जो खपरा[7] कर ले घर डोलत, माँगत भीखहि तैा नहिं लाजै।
जो सुख सेज पटंबर भूषण, लावत चंदन तैा नहिं राजै॥
जो कोउ आय कहै मुख तैं कछु, जानत ताहि बयारहि बाजै।
सुंदर संसय दूर भयो सब, जो कछु साधु करै सोइ छाजै॥१०

---

(१) मूँगा। (२) बंदर। (३) बिना परिश्रम के। (४) मल्लाह। (५) छाँही। (६) पच्छी। (७) भीख माँगने का खप्पड़।

कोउक निंदत कोउक बंदत, कोउक देतहि आइ जु भच्छन।
कोउक आय लगावत चंदन, कोउक डारत धूरि ततच्छन॥
कोउ कहै यह मूरख दीसत, कोउ कहै यह आहि बिचच्छन[1]।
सुंदर काहु सुँ राग न द्वेष न, ये सब जानहु साधुके लच्छन ॥११
तात मिलै पुनि मात मिलै, सुत भ्रात मिलै युवती सुखदाई।
राज मिलै गज बाज मिलै सब, साज मिलै मन बांछितपाई॥
लोक मिलै सुरलोक मिलै, बिधि[2] लोक मिलै वैकुंठहु जाई।
सुंदर और मिलै सबही सुख, संत समागम दुर्लभ भाई ॥१२॥

॥ मनहर छंद ॥

देवहू भये तेँ कहा, इंद्रहू भये तेँ कहा।
बिधिहू[2] के लोक तेँ, बहुरि आइयतु है॥
मानुष भये तेँ कहा, भूपति[3] भये तेँ कहा।
द्विजहू भये तेँ कहा, पार जाइयतु है॥
पसुहू भये तेँ कहा, पंछिहू भये तेँ कहा।
पन्नग[4] भये तेँ कहा, क्यूँ अघाइयतु है॥
छूटिबे को सुंदर, उपाय एक साधु संग।
जिनकी कृपा तेँ अति, सुख पाइयतु है॥ १३ ॥
इंद्राणी सृंगार धरि, चंदन लगायो अंग।
वाहि देखि इंद्र अति, काम बस भयो है॥
सूकरिहू करदम,[5] बीच माहिँ लोटि करि।
आगे जाइ सूकर को, मन हरि लयो है॥
जैसो सुख सूकर को, तैसो सुख मघवा[6] को।
तैसो सुख नर पसु, पच्छिन कूँ दयो है॥

(१) ज्ञानी। (२) ब्रह्मा। (३) राजा। (४) साँप। (५) कीचड़। (६) इन्द्र।

सुंदर कहत जा कें, भयो ब्रह्मानंद सुख ।
सोइ साधु जगत मैं, जीतिकरि गयो है ॥ १४ ॥

धूलि जैसो धन जा के, सूलि सो संसार सुख ।
भूलि जैसो भाग देखै, अंत कैसी यारी है ॥
पाप जैसी प्रभुताई, साँप जैसो सनमान ।
बड़ाई बच्छुन जैसी, नागिनी सी नारी है ॥
अग्नि जैसो इंद्र-लोक, बिघ्न जैसो बिधि-लोक ।
कीरति कलंक जैसी सिद्धि सी ठगारो है ॥
बासना[1] न कोई वा की, ऐसी मति सदा जा की ।
सुंदर कहत ताहि, बंदना[2] हमारी है ॥ १५ ॥
कामही न क्रोध जा के, लोभही न मोह ता के ।
मदही न मत्सर न, कोउ न बिकारो है ॥
दुखही न सुख मानै, पापही न पुन्न जानै ।
हरष न सोक आनै, देहही तें न्यारो है ॥
निंदा न प्रसंसा करै, रागही न द्वेष धरै ।
लेनही न देन जा के, कछु न पसारो है ॥
सुंदर कहत ता की, अगम अगाध गति ।
ऐसो कोउ साधु सो तौ, रामजी को प्यारो है ॥१६
आठौ जाम जम[3] नेम, आठौ जाम रहै प्रेम ।
आठौ जाम जोग जज्ञ, कियो बहु दान जू ॥
आठौ जाम जप तप, आठौ जाम लीयो ब्रत ।
आठौ जाम तीरथ मैं, करत है स्नान जू ॥
आठौ जाम पूजा बिधि, आठौ जाम आरतिहु ।
आठौ जाम दंडवत, सुमिरण ध्यान जू ॥

---

(१) चाह । (२) प्रणाम । (३) संजम ।

सुंदर कहत जिन, कियो सब आठौ जाम ।
सोई साधु जा के उर, एक भगवान जू ॥१७॥
जैसे आरसी को मैल, काटत सिकलिगर ।
मुख में न फेर कोउ, वहै वा को पोत है ॥
जैसे वैद्य नैन में, सलाका[1] मेलि सुद्ध करै ।
पटल[2] गये तें तहाँ, ज्यूं की त्यूंही जोत है ॥
जैसे बायु बादल, बिखेर के उड़ाइ देत ।
रबि तौ आकास माहिं, सदाही उद्योत[3] है ॥
सुंदर कहत भ्रम, छिन में बिलाय जात ।
साधुही के संग तें, स्वरूप ज्ञान होत है ॥१८॥
मृतक दादुर[4] जीव, सकल जिवाये जिन ।
बरषत बाणी मुख, मेघ की सी धार कूं ॥
देत उपदेस कोउ, स्वारथ न लवलेस ।
निसिदिन करत है, ब्रह्महि बिचार कूं ॥
औरहू संदेह सब, मेटत निमिष[5] माहिं ।
सूरज मिटाइ देत, जैसे अंधकार कूं ॥
सुंदर कहत हंस, बासी सुखसागर के ।
संत जन आये हैं, सो पर उपकार कूं ॥ १९ ॥
हीराही न लालही न, पारस न चिंतामणि ।
औरहु अनेक नग, कहै कहा कीजिये ॥
कामधेनु सुरतरु[6], चंदन नदी समुद्र ।
नौकाहू जहाज बैठ, कबहूंक छीजिये ॥
पृथ्वी अप तेज वायु, व्योम लौं सकल जड़ ।
चंद्र सूर सीतल, तपत गुण लीजिये ॥

---

(१) सलाई। (२) जाला। (३) उगता। (४) मेढक। (५) पल। (६) कल्प वृक्ष।

सुंदर बिचारि हम, सोधि सब देखे लोक।
संतन के सम कहो, और कहा दीजिये ॥ २० ॥
जिन तन मन प्राण, दीन्हो सब मेरे हेत।
औरहू ममत्त्व बुद्धि, आपनी उठाई है ॥
जागत हू सोवत हू, गावत है मेरे गुण।
करत भजन ध्यान दूसरी न काई है ॥
तिन के मैं पीछे लग्यो, फिरत हूँ निसिदिन।
सुंदर कहत मेरी, उन तें बड़ाई है ॥
वहै मेरे प्रिय मैं हूँ, उनके आधीन सदा।
संतन की महिमा तो, स्रीमुख सुनाई है ॥२१॥
जगत ब्योहार सब, देखत है ऊपर को।
अंतःकरणकूँ तो, नेक न पिछानै है ॥
छाजन की भोजन की, हलन चलन कछु।
और कोऊ क्रिया की तो, मध्यही बखानै है ॥
आपनेही अवगुण, आरोपै अज्ञानी जीव।
सुंदर कहत ता तें, निंदाही कूँ ठानै है ॥
भाव मैं तो अंतर है, राति अरु दिन कै सोँ।
साधु की परीच्छा कोउ, कैसे करि जानै है ॥२२॥
वही दगाबाज वही, कुष्टी जु कलंक भस्यो।
वही महा पापी वा के, नख सिख कीच है ॥
वही गुरुद्रोही, गऊ ब्राह्मण हननहार।
वही आतमा को घाती, ऐसी वा के बीच है ॥
वही अघ को समुद्र, वही अघ को पहाड़।
सुंदर कहत वा की, बुरी भाँति मीच है ॥

वही है मलेच्छ वही, चांडाल बुरे तें बुरो।
संतन की निंदा करै, सो तो महा नीच है ॥२३॥
परिहै बिजुरि[1] ता के, ऊपर सूँ अचानक।
धूरि उड़ि जाय, कहूँ ठौर नहिँ पाइहै ॥
पीछे केऊ[2] जुग, महा नरक मैँ परै जाइ।
ऊपर तें जमहू की, मार बहु खाइ है ॥
ताके पीछे भूत प्रेत, स्थावर जंगम जोनि।
सहैगो संकट तब, पीछे पछताइहै ॥
सुंदर कहत और, भुगतै अनंत दुख।
संतन कूँ निंदै ता को, सत्यानास जाइ है ॥२४॥
कूप मैँ को मैँडक, सो कूप कूँ सराहत है।
राजहंस सूँ कहत, केतो तेरो सर[3] है ॥
मसका[4] कहत मेरी, सरवर[5] कैान उड़ै।
मेरे आगे गरुड़ की, केती एक जर[6] है ॥
गुबरीला गोली कूँ लुढाइ, करि मानै मोद[7]।
मधुप कूँ निंदत, सुगंधि जा को घर है ॥
अपनी न जानै गति, संतन को नाम धरै।
सुंदर कहत देखो, ऐसो मूढ़ नर है ॥ २५ ॥
कोऊ साधु भजनीक, हुतो लयलीन अति।
कबहूँ प्रारब्ध कर्म, धक्का आइ दयो है ॥
जैसे कोउ मारग मैँ, चलत अखंड फेरि।
बैठि करि उठै तब, वहै पंथ लयो है ॥
जैसे चंद्रमा की पुनि, कला छीन होइ गई।
सुंदर सकल लोक, द्वितिया को नयो है ॥

(१) बिजली। (२) कई। (३) तालाब। (४) मसा। (५) बराबर। (६) औक़ात।
(७) गोबरीला कीड़ा गोबर की गोली लुढ़का कर ख़ुश होता है।

देवहु को देव तन, गयो ता में कहा भयो।
पीतर को मोल सो तौ, नाहिं कछु गयो है ॥२६
ताहि के भगति भाव, उपजत अनायास।
जा की मति संतन सूँ, सदा अनुरागी है॥
अति सुख पावै ता के, दुख सब दूर होइ।
औरहू काहू की जिन, निंदा सब त्यागी है॥
संसार की पास[1] काटि, पाइहै परमपद।
सतसंगही तें जा की, ऐसी मति जागी है॥
सुंदर कहत ता को, तुरत कल्याण होइ।
संतन को गुण गहै, सोई बड़भागी है॥ २७॥
जोग जज्ञ जप तप, तीरथ ब्रतादि दान।
साधन सकल नहिं, या की सरवर है॥
और देवी देवता, उपासना अनेक भाँति।
संक सब दूर करि, तिन तें न डर है॥
सबही के सीस पर, पाँव दे मुकति होइ।
सुंदर कहत सो तौ, जनमै न मर है॥
मन बच काय करि, अंतर न राखै कछु।
संतन की सेवा करै, सोई निसतर[2] है॥ २८॥
प्रथम सुजस लेत, सीलहु संतोष लेत।
छमा दया धर्म लेत, पाप तें डरतु है॥
इंद्रिन कूँ घेरि लेत, मनही कूँ फेरि लेत।
जोग की जुगति लेत, ध्यानही धरतु है॥
गुरु को बचन लेत, हरिजी को नाम लेत।
आतमा कूँ सोधि लेत, भौजल तरतु है॥

(१) फंदा। (२) पार उतरने वाला।

सुंदर, कहत जग, संत कछु लेत नाहिं ।
संतजन निसि दिन, लेबोही करतु है ॥ २९ ॥

साचो उपदेस देत, भली भलो सीख देत ।
समता सुबुद्धि देत, कुमति हरतु है ॥
मारग दिखाइ देत, भावहु भगति देत ।
प्रेम की प्रतीति देत, अभरा भरतु है ॥
ज्ञान देत ध्यान देत, आतम बिचार देत ।
ब्रह्म कूँ बताइ देत, ब्रह्म में चरतु है ॥
सुंदर, कहत जग, संत कछु देत नाहिं ।
संत जन निसिदिन, देवोही करतु है ॥ ३० ॥

इति साधु को अंग संपूर्ण ॥ २९ ॥

३०—ज्ञानी को अंग ।

॥ इंदव छन्द ॥

जाहि हृदै महँ ज्ञान प्रकासत, तासु सुभाव रहै क्यौं छानौ ।
नौनहिं बैनहिं सैनहिं जानिय, ऊठत बैठतही अलसानौ ॥
ज्यूँ कछु भच्छ किये उदगारत[1], कैसहि राखि सकै न अघानौ
सुंदरदास प्रसिद्ध दिखावत, धानको खेत परार[2] लौं जानौ ॥१

ज्ञान प्रकास भयो जिनके उर, वे घट क्यूँहि छिपे न रहैंगे ।
भोड़ल[3] माहिं दुरै[4] नहिं दीपक, यद्यपि वे मुख मौन गहैंगे ॥
ज्यूँ घनसारहि[5] गोप्य[6] छिपावत, तौहुँ सुगंध सु तज्ञ[7] लहैंगे ।
सुंदर और कहा कोउ जानत, बूँटँ कि बात बटाऊ[8] कहैंगे ॥२

(१) डकार लेता है । (२) पयाल । (३) अभ्रक । (४) छिपे । (५) कपूर ।
(६) गुप्त । (७) ज्ञाता । (८) मुसाफ़िर ।

बोलत चालत बैठत ऊठत, पीवत खातहुँ सूँघत स्वासै।
ऊपर तौ व्यवहार करै सब, भीतर सुन्न समान जु भासै॥
ले करि तीर पतालहि साधत, मारत है पुनि फेर अकासै।
सुंदर देह क्रिया सब देखत, कौउक पावत ज्ञानो को आसै॥३
बैठे तौ बैठे चलै तु चलै पुनि, पीछे तु पीछे रु आगे तु आगै।
बोले तु बोले न बोले तु मौनहि, सोवे तु सोवे रु जागे तु जागै॥
खाइ तु खाइ नहीं तु नहीं, जु गहै तु गहै पुनि त्यागै तु त्यागै
सुंदर ज्ञानी कि ऐसी दसा यह, जानै नहीं कछु राग विरागै॥४
देखत है पै कछू नहिं देखत, बोलत है नहिं बोल बखानै।
सूँघत है नहिं सूँघत घ्राण, सुनै सबहै न सुनै यह कानै॥
भच्छ करै अरु नाहिं भखै[1] कछु, भेटत है नहिं भेटत प्रानै।
लेतहि देतहि लेत न देतहि, सुंदर ज्ञानी कि ज्ञानिहि जानै॥५
काज अकाज भलो न बुरो कछु, उत्तम मध्यम दृष्टि न आवै।
कायिक बाचिक मानस कर्म सु, आप बिषे न तिहूँ ठहरावै॥
हूँ करिहूँ न कियो न करूँ अब, यूँ मन इंद्रिन कूँ बरतावै।
दीसत है व्यवहार बिषे नित, सुंदर ज्ञानी कि कौउक पावै॥६
देखत ब्रह्म सुनै पुनि ब्रह्महि, बोलत है वहि ब्रह्महि बानी।
भूमिहु नीरहु तेजहु वायुहु, ब्योमहु ब्रह्म जहाँ लगि प्रानी॥
आदिहु अंतहु मध्यहु ब्रह्महि, है सब ब्रह्म यहै मति ठानी।
सुंदर ज्ञेय[2] रु ज्ञानहु ब्रह्महि, आपहु ब्रह्महि जानत ज्ञानी॥७
बैठत केवल ऊठत केवल, बोलत केवल बात कही है।
जागत केवल सोवत केवल, जोवत केवल दृष्टि लही है॥

(१) खाय। (२) जानने योग्य।

भूतहु[1] केवल भव्य[2]हु केवल, वर्त्तत[3] केवल ब्रह्म सही है।
है सबही अध ऊर्द्ध सु केवल, सुंदर केवल ज्ञान वही है॥८॥
केवल ज्ञान भयो जिन के उर, ते अध ऊर्द्ध सु लोक न जाहीं।
व्यापक ब्रह्म अखंड निरंतर, वा बिन और कहूँ कछु नाहीं॥
ज्यूँ घट नास भयो घट व्योम, सु लीन भयो पुनि है नभ माहीं।
त्यूँ पुनि मुक्ति जहाँ वपु छाड़त, सुंदर मोच्छ सिला कहु काहीं[4]
आदि हुतो नहिं अंत रहै नहिं, मध्य सरीर भयो भ्रम कूपा।
भासत है कछु और कुँ औरहि, ज्यूँ रजु मैं अहि[5] सीपि मैं रूपा।
देखि मरीचि[6] उठ्यो चित बिभ्रम, जानत नाहिं वहै रबि धूपा।
सुंदर ज्ञान प्रकास भयो जब, एक अखंडित ब्रह्म अनूपा॥१०

॥ मनहर छंद ॥

जाहि के बिवेक ज्ञान, ताहि के कुसल भयो।
जाहि ओर जाहि वाकूँ, ताहि ओर सुख है॥
जैसे कोई पाँयनि, पैजार[7] कूँ चढ़ाइ लेत।
ता कूँ तौ न कोऊ, काँटे खोभरे को दुख है॥
भावै कोऊ निंदा करै, भावै तौ प्रसंसा करै।
वो तौ देखे आरसी मैं, आपनोहिं मुख है॥
देह को व्योहार सब, मिथ्या करि जानत है।
सुंदर कहत एक, आतमाही रुख[8] है॥ ११॥
अंतःकरण जा के, तमगुण छाइ रह्यो।
जड़ता अज्ञान वा के, आलस भय त्रास है॥

---

(१) जो हो गया। (२) जो होगा। (३) जो हो रहा है। (४) क्या कहीं मुक्ति का पहाड़ है। (५) साँप। (६) सूरज की किरन में बालू का जल सा दीखना। (७) जूता। (८) आत्मा ही की ओर तवज्जह है।

रजोगुण को प्रभाव, अंत:करण जा के ।
त्रिबिध करम वा के, कामना को बास है ॥
सत्त्वगुण अंत:करण जा के देखियत ।
क्रिया करि सुद्ध वा के, भक्ति को निवास है ॥
त्रिगुण अतीत साच्छी[१] तुरिया सरूप जान ।
सुंदर कहत वा के, ज्ञान को प्रकास है ॥ १२ ॥
तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवा के समान जैसे ।
ता के मध्य सूरज की, रंचहू न जोत है ॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसी की औंधी ओर ।
ता के मध्य सूरज की, कछुक उद्योत[२] है ॥
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे, आरसी की सूधी ओर ।
ता के मध्य प्रतिबिंब सूरज को पोत[३] है ॥
त्रिगुण अतीत[४] जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात ।
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है ॥ १३ ॥
सब सूँ उदास होइ, काढ़ि मन भिन्न करै ।
ता को नाम कहियत, परम वैराग है ॥
अंत:करणहू की, बासना निवृत्त[५] होइ ।
ता कूँ मुनि कहत हैं, वहै बड़ो त्याग है ॥
चित्त एक ईसुर सूँ, नेकहू न न्यारो होइ ।
वहै भक्ति कहियत, वहै प्रेम मार्ग है ॥
आप ब्रह्म कूँ, जगत एक करि जानै सब ।
सुंदर कहत वह, ज्ञान भ्रम भाग है ॥ १४ ॥
कोउ नृप फूलन की, सेज पर सूतौ आइ ।
जब लगि जाग्यो तौ लौं, अति सुख मान्यो है ॥

(१) माया-रहित । (२) चमक । (३) गुण । (४) तीनों गुण से रहित । (५) शान्त ।

नींद जब आई तब, वाहि कूँ सुपन भयो ।
जब पर्यो नरक के, कुंड मैं यूँ जान्यो है ॥
अति दुख पावै, पर निकस्यो न क्यूँही जाहि ।
जागि जब पर्यो तब, सुपन बखान्यो है ॥
यह झूठ वह झूठ, जाग्रत सुपन दोऊ ।
सुंदर कहत ज्ञानी, सब भ्रम भान्यो है ॥ १५ ॥
सुपने मैं राजा होइ, सुपने मैं रंक होइ ।
सुपने मैं सुख दुख, सत्य करि जानै है ॥
सुपने मैं बुद्धिहीन, मूढ़ न समुझ कछु ।
सुपने मैं पंडित, बहु ग्रंथनि बखानै है ॥
सुपने मैं कामी होइ, इंद्रिन के बस पर्यो ।
सुपने मैं जती होइ, अहंकार आनै है ॥
सुपने मैं जाग्यो जब, समुझ परी है तब ।
सुंदर कहत सब, मिथ्या करि मानै है ॥ १६ ॥
बिधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि ।
क्रिया सो करत दीसै, यूँही नितप्रति है ॥
काहू कूँ निकट राखै, काहू कूँ तो दूर भाखै ।
काहू सूँ नेरे न दूर, ऐसी जा की मति है ॥
रागहू न द्वेष कोऊ, सोक न उछाह दोऊ ।
ऐसी बिधि रहै कहूँ रति न बिरति[1] है ॥
बाहिर ब्योहार ठानै, मन मैं सुपन जानै ।
सुंदर ज्ञानी की कछु, अदभुत गति है ॥ १७ ॥
कामी है न जति है न, सूम है न सखी[2] है न ।
राजा है न रंक है न, तन है न मन है ॥

(१) न कहीं आशक्त और न विरक्त । (२) उदार ।

सोवै है न जागै है न, पीछे है न आगे है न ।
गहै न त्यागै है न, घर है न बन है ॥
थिर है न डोलै है न, मौन है न बोलै है न ।
बंध है न मोच्छ है न, स्वामी है न जन है ॥
वैसो कोऊ होवै जब, वा की गति जानै तब ।
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञान सुद्ध घन है ॥ १८ ॥

स्रवण सुनत, मुख बोलत बचन, घ्राण ।
सूँघत फूलन रूप, देखत दृगन है ॥
त्वक सपरस[1], रस रसना, ग्रसत कर ।
गहत असन[2] मुख, चलत पगन है ॥
करत गमन सुनि, बैठत भवन सेज ।
सोवत रवन पुनि, ओढ़त नगन है ॥
जो जो कछु ब्यवहार, जानत सकल भ्रम ।
सुंदर कहत ज्ञानी ज्ञान मैं मगन है ॥ १९ ॥

कर्म न विकर्म करै, भाव न अभाव धरै ।
सुभ न असुभ परै, या तैं निधरक[3] है ॥
बसती न सून्य जा के, पापहू न पुन्न ता के ।
अधिक न न्यून वा के, स्वर्ग न नरक है ॥
सुख दुख सम दोऊ, नीचहू न ऊँच कोऊ ।
ऐसी विधि रहै सोऊ, मिल्यो न फरक है ॥
एकही न दोय जानै, बंध मोच्छ भ्रम मानै ।
सुंदर कहत ज्ञानी, ज्ञान मैं गरक[4] है ॥ २० ॥

---

(१) स्पर्श । (२) भोजन । (३) निःशंक । (४) निमग्न, डूबा हुआ ।

अज्ञानी कूँ दुख को, समूह जग जानियत ।
ज्ञानी कूँ जगत सब, आनँद सरूप है ॥
नैनहीन कूँ तौ, घर बाहिर न सूझै कछु ।
जहाँ जहाँ जाय, तहाँ तहाँ अंध कूप है ॥
जा के चच्छु[१] है प्रकास, अंधकार भयो नास ।
वा के जहाँ रहै तहाँ, सूरज की धूप है ॥
सुंदर अज्ञानी ज्ञानी, अंतर[२] बहुत आहि ।
वा के सदा राति वाके, दिवस अनूप है ॥ २१ ॥
ज्ञानी अरु अज्ञानी की, क्रिया सब एकसी ही ।
अज्ञ[३] आसवान,[४] ज्ञानी आस न निरास है ॥
अज्ञ जोई जोई करै, अहंकार बुद्धि धरै ।
ज्ञानी अहंकार बिनु, करत उदास है ॥
अज्ञ सुख दुख दोऊ, आप विषे मानि लेत ।
ज्ञानी सुख दुख कूँ न, जानै मेरे पास है ॥
अज्ञ कूँ जगत यह, सकल संताप करै ।
ज्ञानी कूँ सुंदर सब, ब्रह्म को बिलास है ॥ २२ ॥
ज्ञानी लोक संग्रह कूँ, करत ब्योहार बिधि ।
अंतःकरण मैं तौ, स्वप्न की सी दौर है ॥
देत उपदेस नाना भाँति के बचन कहि ।
सब कोऊ जानत, सकल सिरमौर है ॥
हलन चलन पुनि, देह को करत नित ।
ज्ञान मैं गरक[५] गति, लिये निज ठौर है ॥
सुंदर कहत जैसे, दंत गजराज मुख ।
खाइबे के और रु, दिखाइबे के और है ॥ २३ ॥

(१) आँख । (२) बीच । (३) अज्ञानी । (४) आशाधारी । (५) डूबा हुआ ।

इंद्रिन को ज्ञान जा के, सो ही है पसु समान ।
देह अभिमान, खान पानही सूँ लीन है ॥
अंतःकरण ज्ञान, कछुक बिचार जाके ।
मनुष ब्योहार, सुभ कर्म के आधीन है ॥
आतम बिचार ज्ञान, जा के निसि बासर है ।
सो ही साधु सकलही, बात मैं प्रबीण[1] है ॥
एक परमातमा को, ज्ञान अनुभव जाके ।
सुंदर कहत वह, ज्ञानी भ्रमछीन है ॥ २४ ॥
जाहि ठौर रवि को, प्रकास भयो ताहि ठौर ।
अंधकार भागि गयो, गृह बनवास तैं ॥
न तौ कछु बन तैं, उलटि आवै घर माहिं ।
न तौ बन चलि जाइ, कनक आवास[2] तैं ॥
जैसे पच्छी पच्छ[3] टूटि, जाहि ठौर पर्‌यो आइ ।
ताहि ठौर गिरि रह्यो, उड़िबे की आस तैं ॥
सुंदर कहत, मिटि जाइ सब दौड़ दुख ।
धोखो न रहत कोऊ, ज्ञान के प्रकास तैं ॥ २५ ॥
जैसे कोऊ देस जाइ, भाषा कहै और सी ही ।
समुझै न कोऊ वा सूँ, कहै क्या कहतु है ॥
कोउ दिन रहि करि, बोली सीखै उनहीं की ।
फेरि समुझावै तब, सब को लहतु है ॥
तैसे ज्ञान कहत, सुनत बिपरीत लागै ।
आप आपनोही मत, सब को गहतु है ॥

---

(१) चतुर। (२) सोने का घर। (३) पंख।

उनही के मत करि, सुंदर कहत ज्ञान ।
तबही तैं ज्ञान, ठहराइ के रहतु है ॥ २६ ॥
एक ज्ञानी कर्मन में, तत्पर देखियत ।
भक्ति को प्रभाव नाहिं, ज्ञान में गरक है ॥
एक ज्ञानी भगति को, अत्यंत प्रभाव लिये ।
ज्ञान माहिं निस्चै करि, कर्म सूँ तरक है ॥
एक ज्ञानी ज्ञानही में, ज्ञान को उचार करै ।
भक्ति अरु कर्म इन, दुहूँ तैं फरक है ॥
कर्म भक्ति ज्ञानी तीनूँ, वेद में बखानि कहै ।
सुंदर बतायो गुरु, ताही में लरक है ॥ २७ ॥
जैसे पंछी पगन सूँ, चलत अवनि[1] आइ ।
तैसे ज्ञानी देह करि, करम करतु है ॥
जैसे पंछी चंचु करि, चुगत अहार पुनि ।
तैसे ज्ञानी उर में, उपासना धरतु है ॥
जैसे पंछी पंखन सूँ, उड़त गगन माहिं ।
तैसे ज्ञानी ज्ञान करि, ब्रह्म में चरतु है ॥
सुंदर कहत ज्ञानी, तीनूँ भाँति देखियत ।
ऐसी बिधि जानै सब, संसय हरतु है ॥ २८ ॥

॥ इंदव छंद ॥

एक क्रिया करि किर्षि[2] निपावत, आदरु अंत ममत्त्व बँध्यो है ।
एक क्रिया करि पाक[3] करै जब, भोजन कूँ कछु अन्न रँध्यो है ॥
एक क्रिया मल त्यागत है लघु[4], नीत करै कहुँ नाहिं फँध्यो है ।
त्यूँ यह कर्म उपासन ज्ञानहि, सुंदर तीन प्रकार सँध्यो है ॥ २९

---

(१) पृथ्वी । (२) खेती । (३) रसोई । (४) छोटा ।

दोउ जने मिलि चौपर खेलत, सारि[1] मरै पुनि डारत पासा।
जीतत है सु खुसी मन मैँ अति, हारत है सु भरै हि उसाँसा॥
एक जनो दोउ ओरहि खेलत, हार न जीत करै जु तमासा।
त्यूँहि अज्ञानि कूँ द्वैत भयो भ्रम, सुंदर ज्ञानि कूँ एक प्रकासा३०

॥ सवैया ॥

जीव नरेस अविद्या निद्रा, सुख सेज्या[2] सोयो करि हेत।
कर्म खवारा पुट भरि लाई[3], तातैँ बहु विधि भयो अचेत॥
भक्ति प्रधान जगायो कर गहि, आलस भरी जँभाई लेत।
सुंदर अब निद्रा बस नाहीँ, ज्ञान जागरण सदा सुचेत॥३१॥

ज्ञानी कर्म करै नाना विधि, अहंकार या तन को खोवै।
कर्मन को फल कछू न जोवै, अंतःकरण बासना धोवै॥
ज्यूँ कोऊ खेती कूँ जोतत, लेकरि बीज भूमि के बोवै।
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँगि[4] नहाई कहा निचोवै॥३२॥

इति ज्ञानी को अंग संपूर्ण॥ ३०॥

३१—निःसंशय ज्ञानी को अंग।

॥ मनहर छंद॥

भावै देह छूटि जाहु, कासी माहिँ गंगा तट।
भावै देह छूटि जाहु, छेत्र मगहर मेँ॥
भावै देह छूटि जाहु, विप्र के सदन[5] मध्य।
भावै देह छूटि जाहु, स्वपच[6] के घर मेँ॥
भावै देह छूटै देस, आरज अनारज[7] मैँ।
भावै देह छूटि जाहु, बन मेँ नगर मैँ॥

---

(१) गोट। (२) पलँग। (३) बुरे कर्म्माँ की पोटली बाँध के लाई। (४) नंगी। (५) घर। (६) डोम। (७) पवित्र चाहे अपवित्र देश मेँ।

सुंदर ज्ञानी के कछु, संसय रहत नाहिं ।
सुरग नरक सब, भागि गयो भरमें ॥ १ ॥
भावै देह छूटि जाहु, आजही पलक माहिं ।
भावै देह रहु, चिरकाल[1] जुग अंत जू ॥
भावै देह छूटि जाहु, ग्रीषम[2] पावस[3] ऋतु ।
सरद सिसिर सीत, छूटत बसंत जू ॥
भावै दक्षिणायनहु, भावै उत्तरायणहु ।
भावै देह सर्प सिंह, बीजली हनंत जू ॥
सुंदर कहत एक, आतमा अखंड जानि ।
याही भाँति निरसंसै, भये सब संत जू ॥ २ ॥

॥ इंदव छंद ॥

कै यह देह गिरो बन पर्वत, कै यह देह नदीहि बहो जू ।
कै यह देह धरो धरती महिं, कै यह देह कृसानु[4] दहो जू ॥
कै यह देह निरादर निंदहु, कै यह देह सराह कहो जू ।
सुंदर संसय दूर भयो सब, कै यह देह चलो कि रहो जू ॥३॥
कै यह देह सदा सुख संपति, कै यह देह विपत्ति परो जू ।
कै यह देह निरोग रहो नित, कै यह देहहि रोग चरो जू ॥
कै यह देह हुतासन[4] पैठहु, कै यह देह हिमार गरो[5] जू ।
सुंदर संसय दूर भयो सब, कै यह देह जिवो कि मरो जू ॥४॥

इति निःसंशय ज्ञानी को अंग संपूर्ण ॥ ३१ ॥

३२–प्रेमज्ञानी को अंग ।

॥ इंदव छंद ॥

प्रीति[6] कि रीति कछू नहिं राखत, जाति न पाँति नहीं कुल गारो[7] ।
प्रेम कुं नेम कहूँ नहिं दीसत, लाज न कानलग्यो सबखारो ॥

---

(१) बहुत दिनों तक । (२) गरमी । (३) बरसात । (४) आग । (५) बर्फ़ में गल जाय । (६) संसारी प्रीत वा मोह । (७) कुल की निन्दा की परवाह नहीं रही ।

लीन भयो हरि सूँ अभिअंतर[1], आठहु जाम रहै मतवारो।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडो हि[2] न्यारो॥१
ज्ञान दियो गुरुदेव कृपा करि, दूरि कियो भ्रम खोरि[3] किवारो।
और क्रिया कँह कौन करै अब, चित्त लग्यो परब्रह्म पियारो॥
पाँव बिना चलिबो कहि ठौर हु, पंगु भयो मन मीत हमारो।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडो हि न्यारो॥२॥
एक अखंडित ज्यूँ नभ व्यापक, बाहिर भीतर है इकसारो।
दृष्टि न मुष्टि न रूप न रेख, न स्वेत न पीत न रक्त न कारो॥
चकित होइ रहै अनुभौ बिनु, जौं लगि नाहिं न ज्ञान उजारो।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडो हि न्यारो३
द्वंद बिना बिचरै बसुधा पर, जा घट आतमज्ञान अपारो।
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो[4]॥
जोग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दसा न ढँक्यो न उघारो।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडो हि न्यारो।४
लच्छ अलच्छ अदच्छ न दच्छ, न पच्छ अपच्छ न तूल न भारो।
झूँठ न साच अबाच न बाच, न कंचन काँच न दीन उदारो॥
जान अजान न मान अमान, न सान गुमान न जीत न हारो।
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडो हि न्यारो॥५

इति प्रेमज्ञानी को अंग संपूर्ण ॥ ३२ ॥

३३—आत्म अनुभव को अंग।

॥ इंदव छंद ॥

है दिल में दिलदार सही अँखियाँ, उलटी करि ताहि चितैये।
आब[5] में खाक में बाद[6] मैं आतस[7], जान मैं सुंदर जानि जनैये॥

(१) अंतःकरण। (२) राह। (३) खोल कर। (४) मेरा और तेरा। (५) पानी।
(६) हवा। (७) आग।